Chapter - 3

# तृतीय अध्याय

# आधुनिक वीर काव्य और उसकी परम्परा

साहित्य का इतिहास हमारी भाव समष्टि, चिन्तन एवं विचारों का इतिहास है. वह विभिन्न युगों में राजसत्ताओं के उत्थान और पतन की कहानी मात्र नहीं हो सकता. हमारे चिन्तन एवं विचारों का प्रवाह जिन घटनाओं और युगों से गुजरा है, उन्हें उसने प्रभावित अवश्य किया है, किन्तु उन घटनाओं के साथ-2 वह समाप्त या खंडित नहीं हो गया. वह एक अजस्त्र धारा के रूप में प्रवाहित रहा जिस तरह नदी विभिन्न स्थानों, मैदानों और पहाड़ों में अपने अलग- अलग रूपों में बहती हुई समुद्र में मिल जाती है इसी तरह साहित्य की मन्दाकिनी गतिशील होकर अपनी समग्रता में, मानवतावादी उन्मेष का सागर बन जाती है. अगर हम इस दृष्टि से देखें तो भारतेन्दु युग, छायावादी, प्रगतिवादी और प्रयोगवादी युग का काल विभाजन केवल विवेचन गत सुविधा के विचार से किया गया है. साहित्य में काल खण्डों का विभाजन आज से कुछ समय पूर्व इतना रूढ़ हो गया कि हर दशक बिना किसी विशिष्ट उपलब्धि के एक कालखण्ड बना दिया गया. इस विवाद में न जाकर स्थूल रूप से यह कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल का प्रारंभ प्राय: भारतेन्दु युग से माना जाता है. हमारे अध्ययन का विषय इस आधुनिक काल के पर्याप्त पश्चात्वर्ती काल खण्ड से सम्बन्धित है, अत: हिन्दी साहित्य के इतिहास के परिप्रेक्ष्य में हमारा प्रतिपाद्य द्विवेदी युग के पश्चात् लिखे गये वीर काव्यों का अनुशीलन है. हिन्दी के आधुनिक काल का जो अन्तर्विभाजन विविध विद्वानों ने प्रस्तुत किया है वह संक्षेप में इस प्रकार है---

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल को तीन भागों में विभाजित किया है--

   1. प्रथम उत्थान- सं० 1925-50
   2. द्वितीय उत्थान- सं० 1950-75
   3. तृतीय उत्थान- सं० 1975 से ---

2. " महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग " में डॉ0 उदयभानु सिंह ने आधुनिक काल के 6: स्थूल विभाग किए हैं-

1. प्रस्तावना युग- सं0 1900 से 1924.
2. भारतेन्दु युग- सं0 1925 से 1942.
3. अराजकता युग- सं0- 1943 से 1959.
4. द्विवेदी युग- सं0 1960 से 1982.
5. वाद युग- सं0 1983 से 1999.
6. वर्तमान युग- सं0 2000 से --- [2]

3. डॉ0 कृष्ण लाल हंस ने " हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास " में आधुनिक काल को निम्नलिखित तीन स्थूल भागों में विभक्त किया है ।

1. भारतेन्दु काल- सं0 1900 से 1960 वि0 तक,
2. द्विवेदी काल- सं0 1961 से 1985 वि0 तक
3. वर्तमान काल (नवयुग)- सं0 1986 से वर्तमान तक [3]

4. " हिन्दी साहित्य के वृहत इतिहास " में आधुनिक काल का काल विभाजन इस प्रकार है-

1. हिन्दी साहित्य का अभ्युत्थान
   भारतेन्दु काल- सं0 1900-50 वि0
2. हिन्दी साहित्य का परिष्कार
   द्विवेदी काल- सं0 1950 से-75 वि0
3. हिन्दी साहित्य का उत्कर्ष
   क) काव्य
   ख) नाटक
   ग) कथा साहित्य
   घ) समालोचना, निबन्ध आदि
   | सं0 1975 से-95 वि0

4. हिन्दी साहित्य का अद्यतन काल- सं0 1995 से 2017 वि0 [4]

5. डा0 किशारी लाल गुप्त ने " हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास " में हिन्दी साहित्य के वृहत इतिहास को ही आधार स्तम्भ बनाकर आधुनिक काल का अन्तर्विभाजन निम्नलिखित प्रकार से किया है-

§1§ भारतेन्दु युग- सं0 1900 से 1950 तक.
§2§ द्विवेदी युग- सं0 1950 से 1975 तक.
§3§ प्रसाद युग- सं0 1975 से 2010 तक.
§4§ हिन्दी साहित्य का साहित्येतर वाङ्मय-- [5]

6. डा0 गणपतिचन्द्र गुप्त ने आधुनिक काल §1857-1965 ई0§ को काव्य परम्परागत दृष्टिकोण के अनुसार निम्नांकित युग भेदों में विभाजित किया है-

1. भारतेन्दु युग- सं0 1914 से 1957 तक §1957 से 1900 ई0§
2. द्विवेदी युग- सं0 1957 से 1977 तक §1900 से 1920 ई0§
3. छायावाद युग- सं0 1977 से 1993 तक § 1920 से 1936 ई0§
4. प्रगतिवाद युग- सं0 1993 से 2002 तक §1936 से 1945 ई0§
5. प्रयोगवाद युग- सं0 2002 से 2022 तक §1945 से 1965 ई0§ [6]

काव्य विभाजन की दृष्टि से डा0 गुप्त का मत अधिक वैज्ञानिक प्रतीत होता है. प्रस्तुत शोध ग्रंथ के विषय प्रतिपादन के लिए इस विभाजन को ही मुख्यतः आधार बनाया गया है. हमारा प्रमुख प्रतिपाद्य छायावाद युग § सन् 1920§ से प्रयोगवादी युग § 1965 ई0 § के मध्य रचित वीर काव्यों का विस्तृत विवेचन एवं विश्लेषण है. अपने प्रतिपाद्य विषय का विस्तृत विवेचन करने से पहले उसकी पूर्व परम्परा पर विहंगम दृष्टिपात अप्रासंगिक न होगा. विषय विवेचन की सुविधा के लिए हमने काल विभाजन

की निम्न प्रक्रिया को अपनाया है.

1. छायावाद युग- 1920 से 1936 ई0.
2. प्रगतिवाद युग- 1936 से 1945 ई0
3. प्रयोगवाद युग- 1945 से 1965 ई0

प्रस्तुत अनुशीलन में हमारा प्रतिपाद्य सन् 1920 से लेकर 1965 तक रचित वीर काव्यों का अनुशीलन है किंतु इस अनुशीलन की पूर्ववर्ती वीर काव्य परंपरा की संक्षिप्त चर्चा यहाँ प्रासंगिक है.

पूर्ववर्ती परम्परा ( भारतेन्दु और द्विवेदी युग )

सन् 1920 से पूर्व भारतेन्दु और महावीर प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के आकाश में जगमगाते रहे. उनके समय न केवल ब्रज भाषा की कविताओं में पुराने रीति कवियों की परिपाटियों को ही अपनाया गया है, अपितु नवीन भावनाओं को भी स्थान मिला. वस्तुतः कोई भी एक प्रवृत्ति, परिपाटी या प्रेरणा काल-विशेष की सीमाओं में ही जन्म लेकर उसी काल में ही समाप्त नहीं होती बल्कि इसकी परम्परा कभी व्यक्त और कभी अव्यक्त रूप से दीर्घकाल तक चलती रहती है. उदाहरण के लिए हम कह सकते हैं कि न तो वीर गाथा काल समाप्त हुआ न भक्तिकाल और न ही रीतिकाल. आधुनिक काल में हम इन सब प्रवृत्तियों को एक साथ पाते हैं. वीरगाथा काल, तुलसी आदि भक्त कवियों की वीर रस से परिपूर्ण रचनायें, रीतिकाल के भूषण और आधुनिक काल के भारतेन्दु से लेकर अब तक की राष्ट्रीय रचनायें एक ही धरातल पर रखकर देखी जा सकती हैं. 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के समय लिखा गया वीर काव्य सूर्यमल्ल का प्रसिद्ध ग्रंथ " वीर सतसई " है. [7] सूर्यमल्ल के अतिरिक्त अन्य कवियों जैसे किशन जी आढ़ाकृत " भीम विलास " (1882), भिखारी बाबू कृत " गण मण्डला के राजवंश का वर्णन " ( 1930 ), अजबेश भाट

§ द्वितीय § कृत " बघेलवंश वर्णन " § 1935 §, " भोलाराम कृत " गढराज-वंश §1760-1833§ §खंडित प्रति §, सरदार कवि कृत " काशिराज प्रकाशिका " § 1865 § की वीर रस परक रचनाएँ इस युग में मिलती हैं.

उक्त पूर्ववर्ती परम्परा भी अपने युग की देन कही जा सकती है. मध्यकाल में मुगल शासन से संघर्ष समय-समय पर होते रहे. राजपूतों में वीर वृत्ति की अक्षुण्णता युद्धों के कारण विद्यमान रही. दूसरी ओर औरंगजेब की साम्प्रदायिक वैमनस्य की नीति की प्रतिक्रिया में सिक्खों, राजपूतों तथा मराठों ने जो स्वाधीनता संग्राम आरम्भ किया वह भी वीर काव्य की रचना में सहायक कहा जा सकता है. इसका तीसरा कारण कवियों का राजाश्रय भी रहा है, आश्रयदाता के पराक्रम और पौरूष का अतिशयोक्तिपूर्ण कवियों द्वारा होना स्वाभाविक ही था किन्तु आधुनिक युग के वीर काव्यों की रचना भूमि मध्यकाल से किंचित भिन्न है जो कि परवर्ती विवेचन से प्रकट है.

यह लक्ष्य किया जा चुका है कि आधुनिकता का प्रथम उन्मेष भारतीयों के साथ योरोपीय सम्पर्क के कारण हुआ. पूर्ववर्ती अध्याय में हम लक्ष्य कर चुके हैं कि आधुनिक काल की परिस्थितियों ने किस प्रकार हिन्दी वीर काव्यों की प्रेरणा भूमि का निर्माण किया. विनय मोहन शर्मा ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के जन्मकाल की परिस्थिति को राजनीतिक दृष्टि से विस्फोटन काल माना है.[8] प्रारम्भिक युग में कवियों के दो वर्ग प्रकाश में आते हैं-

1. भारतीय गौरव एवं राष्ट्रीयता के कवि.
2. अंग्रेजी शासकों के प्रशंसक कवि

अधिकांश कवियों में राष्ट्रीयता एवं देशभक्ति ही पायी जाती है. भारत को स्वतंत्र कराने में राजनीतिक कारणों से प्रभावित काव्य का विशेष योगदान है. यद्यपि राजभक्ति की रचनाएँ इस युग में मिलती हैं.[9]

परन्तु समय ने करवट बदली और कवि तथा लेखकों को वास्तविकता का भान हुआ. अब वही लेखक और कवि जो अंग्रेजों के प्रशंसक थे स्वदेश प्रेम एवं राष्ट्रीयता पर बल देने लगे. पहली बार भारतेन्दु युगीन कवियों एवं लेखकों के साहित्य में जनक्रान्ति के शंख बजने लगे. समाज सुधार के संबंध में उनके दृष्टिकोण का पता उनके इन ब्राह्मण विरोधी पद्यों से लगता है यथा-

" विधवा ब्याह निषेध कियो, विभिचार प्रचारयो ।।
रोकि विलायत गमन कूप मंडूक बनायो ।
औरन को संसर्ग छुड़ाई प्रचार घटायो ।।
बहु देवी देवता भूत प्रेतादि पुजाई ।
ईश्वर सों सब विमुख किये हिंदुन घबराई ।।
अपरस सोल्हा छूत रचि भोजन प्रीति छुड़ाई ।
किये तीन तेरह सबै चौका-चौका लाई ।। " [10]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समय राष्ट्रीय प्रेम एवं देशभक्ति से परिपूर्ण काव्यों की रचना हुई . हरिश्चन्द्र की " विजयनी विजय वैजयंती " आदि में ऐसी ही ओजपूर्ण कविताओं ,जो पानी में आग लगा दें, मुर्दे दिलों में नया जीवन फूंक दें, यौवन में अल्हड़ तूफान भर दें, मिलती हैं. देश की अधोगति पर मर्माहत व्यथा से जलने वाले हृदय का चित्र भी इनके काव्य में दृष्टिगोचर होता है--

" हाय पंचनद, हा पानीपत ।
अजहुँ रहे तुम धरनि विराजत ।।
हाय चित्तौर निलज तू भारी ।
अजहुँ खरी भारतहिं मँझारी ।।
जा दिन तुव अधिकार नसायो ।
ताहि दिन किन धरनि समायो ।।
रहयो कलंक न भारत-नामा ।
क्यों रे तू वाराणसि धामा ।। [11]

गृह परिवार एवं समाज में नारी की सम्यक् प्रतिष्ठा और राष्ट्र जीवन में उसका अवतरण पुनर्जागरण युग की सबसे महत्वपूर्ण घटना है. इस क्षेत्र में भारतेन्दु अग्रणी रहे और इसके बारे में उन्होंने " नील देवी " नाटक की भूमिका में भी लिखा है कि भारतीय नारियाँ भी पश्चिम की तरह वर्तमान हीनावस्था का उल्लंघन करके उन्नति पथ पर अग्रसर हों और परिवार, देश तथा राष्ट्र की उन्नति में समुचित योगदान दें. [12]

द्विवेदी युग में सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक आन्दोलनों से राजनीतिक चेतना का प्रस्फुरण एवं विकास हुआ. इससे राजनीतिक जीवन में स्वराज्य एवं स्वतंत्रता की साधना होने लगी तथा साहित्य संसार में नागरी और राष्ट्रभाषा हिन्दी का आंदोलन क्षिप्रगति से चल पड़ा. सांस्कृतिक पुनर्जागरण की चेतना द्विवेदी युग में और भी अधिक विकसित हुई. यहाँ तक तिलक जैसे राष्ट्रीय नेता स्वाधीन चेतना के जगाने में भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के प्रति आत्मगौरव की प्रतिष्ठा को आवश्यक मानते थे. उनके द्वारा गणेश उत्सव को राष्ट्रीय पर्व मानने का अभियान इसी प्रकार के प्रयास को द्योतक है जो अभी भी चलता आ रहा है. इसके परिणाम स्वरूप हम देखते हैं कि कवियों ने पौराणिक आख्यानों और ऐतिहासिक महापुरूषों को काव्य का विषय बना कर उपर्युक्त चेतना का साक्ष्य उपस्थित किया. पूर्ववर्ती अध्याय में हम निर्दिष्ट कर चुके हैं कि सन् 1920 के खिलाफत आंदोलन से पूर्व कतिपय क्रान्तिकारियों के प्रयास अवश्य हुए. गोपाल कृष्ण गोखले एवं गांधी भी धीरे-धीरे जन मानस में सम्मानपूर्ण स्थान बनाते जा रहे थे.

अतः कुछ काव्य कृतियाँ ऐसे लोक नायकों के चरित्र को आधार बनाकर लिखी गयीं.

इस युग में रचित काव्य कृतियों को देखने से सर्वप्रधान चेतना उज्ज्वल अतीत के गान की ही दृष्टिगोचर होती है. मैथिलीशरण गुप्त की

" भारत भारती " भी उपर्युक्त सांस्कृतिक पुनर्जागरण की देन कही जा सकती है. संक्षेप में द्विवेदी युगीन प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं --

रंग में भंग ॥ 1909 ॥, हल्दीघाटी का युद्ध ॥1909 ॥, बुंदेलखण्ड का अलबम ॥1911॥, जयद्रथ वध ॥1911॥, वीर पंचरत्न ॥1909-1914॥, भारत भारती ॥1912॥, महाराणा का महत्व ॥1914॥, मेवाड़ गाथा॥ ॥1914॥, चारण ॥1914॥, मौर्य विजय ॥1914॥, प्रण वीर प्रताप ॥1915॥, सती पद्मिनी ॥ 1915॥, औरंगजेब की नंगी तलवार ॥1919॥, गोखले गुणाष्टक ॥1915॥, गोखले प्रशस्ति ॥1915॥, गांधी गौरव ॥1919॥ [13]

उपर्युक्त रचनाओं से प्रकट है कि द्विवेदी युगीन हिन्दी काव्य की सबसे महत्वपूर्ण चेष्टा सांस्कृतिक पुनर्जागरण की है जिसके साथ राष्ट्रीय भावना का भी आरंभिक उन्मेष दिखाई पड़ता है. राष्ट्र प्रेम एवं राष्ट्र की अनेक समस्याओं को लेकर कवियों ने कुछ रचनाएँ लिखी. उनमें किसान ॥1917॥, कृषक-क्रंदन ॥1916॥, भारतभक्ति ॥1919॥ इत्यादि महत्वपूर्ण हैं. इसी प्रकार गीतों के रूप में भी उत्कृष्ट काव्य प्रकाश में आया. इन राष्ट्र गीतों में भारत गीतांजलि ॥1914॥, भारत विनय ॥1916॥, भारत गीत ॥1918॥, इत्यादि हैं. इन रचनाओं में किसानों, अनाथों , विधवाओं का करुण क्रंदन है परन्तु उस रूप में नहीं जिस रूप में भारतेन्दु के समय था. इस युग की मुख्य चेतना राष्ट्रीय होने के कारण सामाजिक सुधार की ओर इन कवियों की दृष्टि उपेक्षाकृत कम गयी. आलोच्य युगीन कवि वर्तमान अधोगति का चित्र खींचते हुए पुरुषार्थ द्वारा अपने को उन्नत एवं सम्मान भाजन बनाने का आग्रह करते दिखाई देते हैं. डॉ० मोहन अवस्थी के शब्दों में " द्विवेदी युग में निराशा का शैवाल जाल हटता हुआ दिखाई देता है, पुरुषार्थ का अदम्य प्रवाह पाषाण खण्डों से लड़ता हुआ आगे बढ़ता है. आत्म जागरण का स्वर्गी संगीत बीसवीं शताब्दी के काव्य का एक नवीन स्वर है. " [14] मैथिलीशरण गुप्त पुरुषार्थ के लिए पुरुषों का आह्वान इस प्रकार करते हैं--

" प्रबल जो तुम में पुरुषार्थ हो-
सुलभ कौन तुम्हें न पदार्थ हो ?
प्रगति के पथ में विचरो, उठो,
पुरुष हो, पुरुषार्थ करो, उठो । " [16]

इस प्रकार इस युग के कवि द्वैतवाद का खण्डन कर उद्योग, परिश्रम, उद्यम एवं पुरुषार्थ की प्रशंसा करना अपना कर्तव्य समझते हैं.

मूल्यांकन -

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि भारतेन्दु युग में जो सामाजिक कविता का सूत्रपात हुआ, उसकी परिपूर्णता द्विवेदी युग में मिली. कवियों ने सामाजिक विषयों पर कविता रचकर समाज-सुधार की भावना को उत्तेजित किया. इन्होंने पश्चिमी रहन-सहन के सर्वांगीण अनुकरण का विरोध किया. इन्हें अपने सामाजिक रीति रिवाज प्रिय हैं और इसी कारण उनकी रक्षा में तत्पर हैं. इन कवियों ने अपनी कविताओं द्वारा पीड़ित एवं दयनीय वर्ग के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित की जिससे चिर उपेक्षित विषयों की कविता में शत-शत अभिव्यक्ति हुई. इन्होंने कहीं समाज सुधार का स्पष्ट उपदेश दिया, कहीं धार्मिक कट्टर पंथियों का व्यंग्यात्मक उपहास किया और कहीं समाज के पथ-भ्रष्ट हठधर्मियों की कठोर भर्त्सना की. राजनीतिक क्षेत्र में स्वराज्य, स्वदेश तथा स्वदेश संबंधी आंदोलनों का प्रभाव तत्कालीन कविता पर प्रतिबिम्बित होता है. इस युग में " हिन्दू-हिन्दी-हिन्दुस्तान " की चेतना का आभास अनेकत्र मिलता है. इस प्रकार द्विवेदी युगीन कविता लोक सुधार के कार्य में पर्याप्त सफल हुई एवं वैयक्तिक, पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक क्षेत्र में अपूर्व क्रान्ति उत्पन्न हो गयी, जिससे प्रभावित होकर भारत वर्ष के विभिन्न प्रान्तों के लोगों ने विविध क्षेत्रों में कार्य कर देशोत्थान का पवित्र कार्य सम्पन्न किया. उन्होंने जाग्रति का शंख नाद फूंक कर जाति में उत्तेजना लाने का उद्योग करने लगे. अतीत के प्रकाश की ओर जनता की चित्तवृत्ति को आकृष्ट कर

वे वर्तमान का अंधकार दूर करना चाहते थे, देश का पुनरुत्थान करने के लिए कवियों ने जनता को उसकी आर्थिक स्थिति से अवगत कराना आवश्यक समझा, प्राचीनता का चित्रांकन कर जाति में अपने विनष्ट हुए गौरव को पुनः हस्तगत करने की एक प्रबल उमंग भर दी और देशवासियों को अपने देश तथा अपने गौरव पर अभिमान करना सिखाया. संक्षेप में हम कह सकते हैं द्विवेदी युगीन काव्य की विषय वस्तु निम्न लिखित युगीन चेतना का आंकलन करती है --

1. प्राचीन गौरव की चेतना- इसमें प्रायः वीर पुरुषों के चरित्रों को काव्य का विषय बनाया गया.
2. सांस्कृतिक परम्परा के प्रति गौरव की भावना.
3. देशप्रेम
4. सामाजिक सुधार की चेष्टा

वीर काव्यों की परम्परा की दृष्टि से विचार करें तो इनमें वीर काव्य अवश्य लिखे गये किन्तु ये प्रायः समकालीन परिस्थिति की देन न होकर सांस्कृतिक पुनर्जागरण से प्रभावित कहे जा सकते हैं.

छायावाद युग (सन् 1920 से 1936 ई० )

आधुनिक हिन्दी कविताकी महत्वपूर्ण प्रवृत्ति के रूप में छायावाद का स्थान शीर्षस्थ है एवं आधुनिक काव्य धारा के इतिहास में इसे स्वर्ण युग भी कह सकते हैं. छायावाद को लेकर पिछले दिनों हिन्दी जगत में पर्याप्त हलचल मची रही जिसमें नाम, सीमा एवं वाद के प्रवर्तक के विषय में विवाद चला आ रहा है. अभी भी इस संबंध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता. सामान्यतः सन् 1920 के आसपास हिन्दी काव्य क्षेत्र में एक नवीन काव्य धारा का सूत्रपात हुआ, जिसे छायावाद का नाम दिया गया. परन्तु इस संबंध में भी हिन्दी आलोचक, इतिहासकार एवं कवि आलोचक एक मत से अभी तक कुछ भी निश्चित नहीं कर पाये हैं.

इस विवाद में न जाकर यहाँ इस युग की काव्य कृतियों के उस पक्ष पर ही हम अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहेंगे, जिसका प्रस्तुत अनुशीलन से सीधा सम्बन्ध है ।

सन् 1918 के पश्चात् का काल राष्ट्रीय चेतना के प्रसार का काल है और इसी समय से ही छायावादी काव्य की रचनायें प्रारंभ हुई हैं. [16] अतः द्विवेदी युग के पश्चात् प्रेम एवं सौन्दर्य को विषयवस्तु बनाकर नयी लाक्षणिक शैली में जहाँ अनेक महत्वपूर्ण काव्य कृतियाँ लिखी गयीं वहाँ दूसरी ओर इतिहास के परिप्रेक्ष्य में लिखे गये राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण आह्वान गीतों की भी रचना हुई. निसंदेह सन् 1920 के पश्चात् सभी राजनीतिक आंदोलनों की अभिव्यक्ति इस काव्यधारा में नहीं है फिर भी इसके कवियों ने प्रखर राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित पर्याप्त कवितायें लिखी हैं. उन रचनाओं में राष्ट्रीय गौरव की भावना एवं सांस्कृतिक जागरण का स्वर अंकित है. छायावादी काव्य के सृजनकाल तक स्वराज्य की कल्पना स्पष्ट हो गयी थी इसलिए यह बात बड़ी सरलता से कह सकते हैं कि छायावाद युग भारतेन्दु और द्विवेदी युगीन राष्ट्रीय विकास की भूमियों को अधिक गहराई तक उर्वरता और प्रसार देता है.

छायावाद काव्य के अग्रणी मुकुटधर पाण्डेय हैं. " पूजागीत " {1916} नाम से उनकी कविता का एक छोटा सा संग्रह भी प्रकाशित हो चुका है. कविताओं की संख्या अधिक नहीं है परन्तु उनका ऐति-हासिक महत्व है. रामनरेश त्रिपाठी के कथा काव्यों में नयी भावुकता के दर्शन होते हैं परन्तु मुख्य कवि तीन हैं- प्रसाद, निराला, पंत. यही छायावाद काव्य की पहली " त्रिमूर्ति " कहे जाते हैं. इन कवियों में " प्रसाद " का नाम सबसे पहले आता है. वास्तव में इस नये काव्य की अनेक प्रवृत्तियों के जन्म और विकास में उनका हाथ सबसे अधिक रहा है. प्रसाद हिन्दी के युग प्रवर्तक कवि और छायावाद के उद्भावक रहे हैं. वे उदात्त सांस्कृतिक भूमिका को लेकर चले हैं. उनका काव्य भारतीय दार्शनिक

भूमिकाओं से भी प्रेरणा लेता रहा है जिसे उन्होंने समसामयिक तथा भारतीय सांस्कृतिक ग्रंथों से पाया है.

छायावाद हिन्दी काव्य का गत्यात्मक विकास है जिसके काव्य की मूल प्रेरणाएँ भारत के राष्ट्रीय और सांस्कृतिक जीवन में अंतर्निहित रही है. छायावाद की मुख्य प्रेरणा सांस्कृतिक और मानवीय है. जैसा हम द्विवेदी युग में वर्णित कर चुके है कि इस युग में देश प्रेम उदात्त भावनाएँ और सांस्कृतिक गौरव रक्षा के लिए कल्याण कामना, समाज के दलित वर्गों तथा नारी के प्रति वेदनाभरी अभिव्यक्ति स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है. राष्ट्रीयता के उत्तरोत्तर विकसित पक्ष को उसके भावात्मक स्वरूप को छायावाद युग में भी देखा जा सकता है. छायावादी कवियों ने राष्ट्रीयता के रागात्मक स्वरूप को ही प्रमुखता दी और उसी की परिधि में अतीत के सुन्दर और प्रेरक देश प्रेम संबंधी मधुर गीतों और कविताओं की सृष्टि की. छायावादी कविता के प्रशान्त राष्ट्रीयता की भावना से अनुप्राणित ये मधुर गीत हिन्दी कविता की अनुपम निधियाँ हैं.[17] कुछ गीतों में परम्परागत राष्ट्रीय सांस्कृतिक भित्ति पर ओजपूर्ण स्वरों में राष्ट्रीयता का संधान किया गया है. इस क्षेत्र में प्रसाद जी का कार्य अप्रतिम है.

जयशंकर प्रसाद ने अतीत के स्वर्ण युग का सहारा लेकर पुनरुत्थान परक भावनाओं द्वारा राष्ट्रीय जागरण का शुभारंभ किया. अतीत के गौरव का बोध उन्हें सबसे अधिक था. उन्होंने आत्म गौरव का ओजस्वी उद्बोधन देकर वर्तमान पराधीन भारत को नयी जागृति व नवीन चेतना के स्वर दिये. अतीत की पृष्ठभूमि पर विजय की आकांक्षा लेकर उन्होंने वर्तमान विभाजित जाति को एक सूत्र में रंगा एवं अतीत को ही प्रेरणा स्त्रोत के रूप में ग्रहण कर उन्होंने इतिहास एवं परंपरा का उपयोग अपने युग की समस्यायें सुलझाने हेतु किया. उन्होंने ऐतिहासिक नाटकों द्वारा यही जातीय जागरण का कार्य किया. प्रसाद ने अतीत का वर्तमान से और यथार्थ का अध्यात्म से सामंजस्य करते हुए मानवतावादी भूमिका प्रस्तुत की है. प्रसाद के राष्ट्रीय

भावना-सम्पन्न गीत उच्चकोटि के मानवीय और सांस्कृतिक संवेदनों को देश की भाव प्रतिमा के रूप में संजोते हैं. सूक्ष्म भावात्मक व्यापकता के साथ कार्नेलिया का यह गीत अविस्मरणीय है--

" अरुण यह मधुमय देश हमारा ।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा ।
× × ×
लघु सुरधनु से पंख पसारे,
शीतल मलय समीर सहारे,
उड़ते खग जिस ओर मुंह किये समझ नीड़ निज प्यारा ।
बरसाती आँखों के बादल,
बनते जहाँ भरे करुणा जल,
लहरें टकराती अनन्त की पाकर जहाँ किनारा । " [18]

राष्ट्रीय भावना के अन्य गीतों की तुलना में इस गीत की अनेक विशेषताएँ हैं. इसमें भारत के भौगोलिक स्वरूप को आधार बनाकर वंदना नहीं की गई है. इसमें स्थूल भारत का सम्मान नहीं है. कवि ने राष्ट्रीय भावना का एक ऐसा गीत निर्मित किया है जिसे सभी देशों के सभी मनुष्य समान आत्मीयता से गा सकते हैं. संकीर्ण देश प्रेम के बदले छायावाद युग की सार्वभौम मानववादी चेतना इसका श्रृंगार करती है. कार्नेलिया द्वारा इसका गायन इसकी सुन्दरता पर और भी चार चाँद लगा देता है क्योंकि वह ग्रीक युवती भारतीय संस्कृति की महिमा पर पूजा के फूल चढ़ाती है.

प्रसाद ने अपने नाटकों में कई गीत प्रयाण गीतों के रूप में लिखे हैं. भारत माता की बेड़ियों को देखकर देश के नवयुवकों में उन्हें तोड़ने का जो उत्साह है, वह इन गीतों में प्रकट हुआ है. अपने प्राणों को हथेली पर रखकर जब समस्त देशवासी जूझ रहे थे, तब मानों स्वतंत्रता स्वयं शैल

शिखर से पुकारती हुई दृष्टिगोचर होती है --

" हिमाद्रि तुंग श्रृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती ।
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला
स्वतंत्रता पुकारती ।
आर्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञा सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो । " [19]

इसी प्रकार " ध्रुवस्वामिनी " में मंदाकिनी का गाया हुआ प्रयाण गीत है जिसमें कठिनतम परिस्थितियों में भी सोत्साह आगे बढ़ते रहने की उद्घर्षिणी वाणी का गंभीर गर्जन है-

" खिलते हों क्षत के फूल वहाँ, बन व्यथा तमिस्त्रा के तारे,
पद-पद पर तांडव नर्तन हो, स्वर सप्तक होवें लय सारे
भैरव रव से हो व्याप्त दिशा, हो कांप रही भय चकित निशा
हो स्वेद धार बहती कपिशा, ऊपर ऊँचे सब शैल चलें ।" [20]

स्कन्दगुप्त में धातुसेन से कहलवाया है- " भारत समग्र विश्व का है और सम्पूर्ण वसुन्धरा उसके प्रेम-पाश में आबद्ध है. अनादिकाल से ज्ञान की, मानवता की ज्योति वह विकीर्ण कर रहा है. वसुंधरा का यह हृदय किस मूर्ख को प्यारा नहीं है ? " [21]

स्कंदगुप्त का यह गीत अत्याधिक महत्वपूर्ण है--

" हिमालय के आंगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार ।
उषा ने हंस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक हार ।
जगे हम, लगे जगाने विश्व लोक में फिर फैला आलोक ।
व्योम-तम-पुंज हुआ तब नष्ट अखिल संसृति हो उठी अशोक ।

× × ×

किसी का हमने छीना नहीं, प्रकृति का रहा पालना यही ।
हमारी जन्मभूमि थी यही, कहीं से हम आये थे नहीं ।

× × ×

जियें तो सदा उसी के लिए, यही अभिमान रहे यह हर्ष,
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष । " [22]

मातृगुप्त ने आर्य गौरव से अनुप्राणित होकर सैनिकों को उत्साहित किया और मर मिटने का यह संदेश दिया है वह स्तुत्य है और राष्ट्रीय भावनाओं का सुंदर प्रतिपादन करण है. इस गीत में भारतीय सांस्कृतिक गौरव के सभी उपकरण हैं. भारत को प्रथम किरणों का उपहार मिला है, हम ही सर्व प्रथम चैतन्य हुए हैं और विश्व में आलोक फैलाया है. हमने किसी से कुछ न छीनते हुए उन्हें अध्यात्म,मानवता,धर्म और विद्या का दान विश्व को दिया है. परतंत्रता की पीड़ा ने संभवत: प्रसाद को अतीत की ओर उन्मुख किया और उनके इस अतीत चिन्तन में भारत के भविष्य की मंगल रेखा छिपी हुई है.

जयशंकर प्रसाद की " पेशोला की प्रतिध्वनि " और " शेर सिंह का शस्त्र समर्पण " शीर्षक कविताओं में भी वीर रस वर्णन की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं और भारत के गौरव से अनुप्राणित हैं. इन कविताओं में मध्ययुगीन भारत के दो महावीरों को प्रस्तुत किया गया है. इन कविताओं का आधार ऐतिहासिक है. सिक्खों ने पराक्रम और शौर्य के साथ युद्ध किया पर अंत में शेरसिंह को शस्त्र समर्पण करना पड़ा-

" आज विजयी हो तुम
और हैं पराजित हम
तुम तो कहोगे, इतिहास भी कहेगा यही,
किन्तु यह विजय प्रशंसा भरी मन की -
एक छलना है ।
वीर भूमि पंचनद वीरता से रिक्त नहीं । [23]

संसार की प्रबलतम शक्ति का निहत्थे मुकाबला करने का साहस ही विजय है --

> " काठ के गोले जहाँ
> आटा बारूद हो
> और पीठ पर हो दुरन्त दंशवों का त्रास
> छाती लड़ती हो भरी आग, बाहुबल से
> उस युद्ध में तो बस मृत्यु ही विजय है । " 24

आत्म बलिदान के प्रभाव का मनोवैज्ञानिक पक्ष भी है. बलिदान के लिए प्रस्तुत होने का अर्थ है- मृत्यु रूपी भय का त्याग. जिस प्रकार एक दीपक दूसरे दीपक को प्रकाशित करता है उसी प्रकार राष्ट्र के निमित्त एक व्यक्ति का बलिदान अन्य लोगों के लिए प्रेरक बन जाता है. गुरु तेगबहादुर ने अपने को मुगल सम्राट औरंगजेब के सम्मुख बलिदान देने के लिए प्रस्तुत किया था परिणामस्वरूप समस्त जाति में जागृति की लहर दौड़ गयी थी. शत्रु पक्ष के लिए अमानवीय अत्याचार करते ही जाना सरल नहीं होता. मृत्यु का भय दिखाकर ही किसी जाति को वश में किया जाता है, मार कर नहीं. अतः आत्म बलिदान की भावना का प्रभाव दो रूपों में पड़ता है -स्वदेशवासियों में उत्साह का संचार तथा प्रतिपक्षी के नैतिक बल का ह्रास. " पेशोला की प्रतिध्वनि " भी अतीत के गौरव का चित्र प्रस्तुत करती है--

> किन्तु वह ध्वनि कहाँ ?
> गौरव की काया पड़ी माया है प्रताप की
> वह मेवाड़ !
> किन्तु आज प्रतिध्वनि कहाँ ? " 25

"प्रलय की छाया " में गुर्जर नरेश की पत्नी कमलावती की आत्महंता दर्शायी गयी है.

वास्तव में प्रसाद ने इतिहास के भग्नावशेषों से अतीत की गौरव गाथाएँ खोजी हैं. ऐतिहासिक घटनाओं के द्वारा राष्ट्रीय भावनाओं का सफल प्रकाशन हुआ है. " महाराणा का महत्व " एक ऐतिहासिक काव्य है, जिसमें राष्ट्र प्रेम की भावना निहित है. इसमें कवि ने एक विदेशी के मुख से प्रताप का यशोगान कराया है--

" सच्चा साधक है सपूत निज देश का
मुक्त पवन में पला हुआ वह वीर है । " [26]

छायावादी काव्य धारा की त्रयी के दूसरे कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी " निराला " हैं. निराला जी का काव्य वास्तव में क्रान्तिकारी है. युग चेतना ने उन्हें यथार्थ की ओर उन्मुख किया. इन्होंने आर्थिक विषमता, उत्पीड़न, दारिद्र्य और पारतंत्र्य बंधनों को देखकर सामाजिक परिवर्तन के लिए कभी करुणा स्वर में और कभी आवेश में अपनी भावनाएँ व्यक्त कीं. " भिक्षुक " [27] रचना में यथार्थ जीवन की करुणा उतारी गयी है तो " विधवा " [28] में समाज द्वारा तिरस्कृत, उपेक्षित, अवहेलित वैधव्य के एकाकी पीड़ामय और करुण साधना युक्त जीवन का मार्मिक चित्रण है. कवि की " बादल " कविता महान क्रान्ति का आभास देती है. इस क्रान्ति का स्वर वर्ग संघर्ष तक पहुँच गया है. बादल जन शक्ति के रूप में अधीर, निर्धन कृषकों के आह्वान पर विप्लव के बादल बनकर विलासी धनिकों को भयभीत करने निकल पड़ते हैं. कृषक प्रसन्न हैं--

" जीर्ण बाहु है शीर्ण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ विप्लव के वीर !
चूस लिया है उसका सार
हाड़ मात्र ही है आधार
ऐ जीवन के पारावार ! " [29]

" जागो फिर एक बार " की दूसरी कविता विशेषतः सामाजिक पक्ष लेकर उद्‌बोधन के रूप में वीर रस से आप्लावित है. इस गीत में कवि दीनभाव को नश्वर कहता है, अपनी शक्ति और महत्ता को पहचानने का संदेश देता है --

किन्तु क्या ?
योग्य जन जीता है,
पश्चिम की उक्ति नहीं,
गीता है, गीता है
स्मरण करो बार-बार-
जागो फिर एक बार । " [30]

अनामिका की " दान " शीर्षक कविता धार्मिक रूढ़ियों पर एक सशक्त व्यंग्य हैं तो " तोड़ती पत्थर " [31] में समाजवादी विचारधारा द्रष्टव्य है. श्रमिका के प्रति कवि की गहरी सहानुभूति व्यक्त हुई है. " वन वेला " कविता में कवि सामाजिक आडम्बर, ढोंग, छोटे, बड़े आदि के त्याज्य भावों को वैयक्तिक धरातल पर व्यक्त करता है. [32] कवि ने एक विद्रोही के रूप में पूर्वजों की लोक रीति का तिरस्कार किया. उन्होंने सामाजिक रूढ़िगत आचार-विचार त्यागकर स्वयं अपनी पुत्री के विवाह मंत्र पढ़े और यहाँ तक कि स्वयं उसकी पुष्प सेज सजाई.

" तुम करो ब्याह, तोड़ता नियम
मैं सामाजिक योग के प्रथम
लग्न के, पढ़ूँगा स्वयं मंत्र
यदि पंडित जी होंगे स्वतंत्र । " [33]

इस सब विशेषताओं के अतिरिक्त निराला में राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक जागरण सबसे अधिक है. देश प्रेम और राष्ट्रीय गौरव से परिपूर्ण उनका " भारति जय विजय करे " गीत अत्याधिक सशक्त बन पड़ा है--

" भारति जय विजय करे
कनक-शस्य कमल धरे
लंका पतदल-शतदल,
गर्जितोर्मि- सागर-जल
धोता शुचि चरण युगल
स्तव कर बहु अर्थ करे । " 34

" परिमल " में यमुना के प्रति कविता सांस्कृतिक चेतना के सुंदर स्मृति चित्र उतारती है. कवि अतीत के सुख स्वप्नों के द्वारा राष्ट्रीय जीवन को प्रेरित कर उसी पुराने सौन्दर्य और माधुर्य को जन्म देना चाहता है--

कहाँ छलकते अब वैसे ही, ब्रज नागरियों के गागर ?
कहाँ भीगते अब वैसे ही, बाहु उरोज, अधर अम्बर ?
बँधा बाहुओं में घट क्षण क्षण, कहां प्रकट बकता अपवाद
अलकों की, किशोर पलकों को
वहाँ वायु देती संवाद ? " 35

" छत्रपति शिवाजी का पत्र " राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित है. उसमें हिन्दू जागरण, सांस्कृतिक उत्थान, सामाजिक इतिहास ओजस्वी स्वरों में मुखरित हुआ है. यह वीरोचित ललकार है जिसमें आधुनिक वातावरण व्यक्त हुआ है. राजपूतों के अपराजित शौर्य और हिन्दू पुनरुत्थान की चेतना इस कविता में व्याप्त है. इसमें इतिहास और संस्कृति का सुंदर समन्वय स्पष्ट है. कवि ने आपसी वैमनस्यता और शीत युद्ध की ईर्ष्यामयी लपटों की ओर संकेत किया है कि पारस्परिक द्वेष भाव हमारी शक्ति को व्यर्थ ही नष्ट करता है । 36

" सहस्त्राब्दि " में कवि ने इतिहास के अध्यायों पर विहंगम दृष्टि डाली है --

" आ रही याद
वह उज्जयिनी, वह निरवसाद
प्रतिमा, वह इति वृत्तात्म कथा
वह आर्य धर्म, वह शिरोधार्य वैदिक समता
पाटलीपुत्र की बौद्ध श्री का अस्त रूप
वह हुई और भू-हुए जनों के और भूप । " [37]

वास्तव में निराला की राष्ट्रीय चेतना में राष्ट्र की नैतिकता, गरिमा, संस्कृति और सामाजिकता बोल उठी है. " विशुद्ध राष्ट्रीय चेतना का विस्तार, सीमा और समय की अवमानना करता हुआ विस्तृत पट भूमि में संस्कृति की गहन. गहराईयों में जड़ जमाता है. 38 इस प्रकार निराला का यह राष्ट्रीय परक वीर काव्य ने सांस्कृतिक पुनर्जागरण, आधुनिक युग के नवजागरण एवं आर्थिक परिस्थितियों से प्रेरणा ग्रहण की प्रतीत होती है. इस कवियत्री के तीसरे कवि सुमित्रानन्दन पंत हैं जिनकी काव्य चेतना निरंतर परिवर्तनशील रही है. अपने काव्य- विकास के प्रथम सोपान में वे प्रकृति चित्रण में तन्मय दिखाई देते हैं. और स्वयं कवि के अनुसार वह उनके स्वभाव का अभिन्न रही है. 39 द्वितीय सोपान में आकर वे कवि कल्पना को काव्य सृष्टि के केन्द्र बिन्दु में रखते हुए दृष्टि-गोचर होते हैं. तृतीय चरण में वे यथार्थवादी विचार के रूप में, जिसमे गांधीवाद और मार्क्सवाद की चेतनाएँ उन्हें प्रभावित करती हुई दिखाई पड़ती है तथा चतुर्थ चरण में अरविंद दर्शन से प्रभावित हो आत्म दर्शन के कवि कहे जा सकते हैं. उनकी " भारत माता ग्राम वासिनी " जैसी कुछ रचनाएँ राष्ट्रीय काव्यधारा की कोटि में आती हैं, किन्तु वीर काव्यों की परम्परा में उनका कोई योगदान परिलक्षित नहीं होता. इसी प्रकार कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में गहरी अन्तर्मुखी भाव साधना विद्यमान है, जिसका सामाजिक परिवेश, युगीन चेतना और वीर काव्यों से सम्बद्ध भावभूमि से कोई संबंध प्रकाश में नहीं आता. अतः दोनों

को छोड़कर शेष कवियों की रचनाओं पर यहाँ पर विचार करना अभीष्ट होगा जो हमारे प्रतिपाद्य की परिधि में आते हैं .

माखनलाल " चतुर्वेदी ", सुभद्रा कुमारी चौहान, बालकृष्ण शर्मा " नवीन ", श्याम लाल गुप्त " पार्षद ", सोहनलाल द्विवेदी आदि कवियों ने प्रत्यक्ष रूप में राष्ट्रीय आंदोलनों में भाग लिया. इन कवियों के काव्य में वर्णित राष्ट्रीयता और देश प्रेम एक नवीन रूप में दृष्टिगोचर होता है तथा साथ ही इन कवियों ने वीर काव्य परम्परा की भूमियों को भी स्पर्श किया है, जैसा की परवर्ती विवेचन से स्पष्ट है. माखन लाल " चतुर्वेदी " ने अतीत के प्रति सम्मान जगाते हुए राष्ट्रीय आन्दोलनों द्वारा भारतीय जनता को आत्म गौरव का ओजस्वी उद्बोधन देकर वर्तमान पराधीन भारत को नवीन जागृति एवं नवीन चेतना का स्वर दिया. " कैदी और कोकिला " कविता में कवि मानों भारत को एक कारागार के रूप में कल्पना करता है जिसकी मुक्ति के लिए कभी देश को यौवन को पुकारता है, तो कभी अन्यत्र युग पुरूष को जगाता है और कभी मोहन रूपी मोहनदास गांधी को जनता का नेतृत्व करने के लिए आह्वान करता है. स्वातन्त्रय प्राप्ति के लिए शक्ति साधना का यही स्वरूप उस समय के लिए उपयुक्त था. कवि ने बलि को अपने काव्य का केन्द्रबिन्दु बनाया है. [40]

कवि ने सत्याग्रहियों के कारावास की कठिनाईयों का उल्लेख भी किया है और साथ ही जेल यात्रा करने वालों के दृढ़ संकल्प की सराहना की है जो सरकार की भीषण यातनाओं की चिन्ता न करते हुए अपने पथ से विचलित नहीं होते. कवि ने सत्याग्रहियों के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए ब्रिटिश कारागार की यंत्रणाओं तथा देशभक्तों के धैर्य का यथार्थ चित्रांकन करते हैं ।

" क्या ? देख न सकतीं जंजीरों का गहना ।
हथकड़ियाँ क्यों ? यह ब्रिटिश राज्य का गहना,
कोल्हू का चर्रक चूँ ? जीवन की तान,

मिट्टी पर अंगुलियों के लिखे गान ?
मैं मोट खींचता लगा पेट पर जुआ,
खाली करता हूँ ब्रिटिश अकड़ का कुआ । " 41

देश के नवयुवकों को आत्म सम्मान खोकर अकर्मण्य और निस्तेज होते देख कवि उनमें वीरता और साहस भरता है ताकि वह विदेशी साम्राज्य वादियों से लोहा ले सकें --

" द्वार बलि का खोल, चल भूडोल कर दें,
एक हिमगिरी एक सिर का मोल कर दें,
मसल कर अपने इरादों सी उठाकर
दो हथेली हैं कि पृथ्वी गोल कर दें ।
रक्त है या है नसों में क्षुद्र पानी ?
जाँच कर तू सीस दे-देकर जवानी ! " 42

इसके साथ ही देश में क्रान्ति लाने का भी आकांक्षी है एवं गांधी की अहिंसात्मक नीति को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया है और पूना के केसरी दल के माध्यम से देश को संदेश भी दिया है. 43 भारतीय देश भक्तों का इतना बड़ा बलिदान तभी सार्थक हो सकता है जब देश में बसने वाले सभी लोग जाति तथा वर्ग की तुच्छ साम्प्रदायिक भेदभावना को विस्मृत कर राष्ट्रीय एकता के बंधन में बंध जायें ।

समग्र रूप से देखें तो चतुर्वेदी जी के काव्य में बलिदान होने का उत्साह, सत्याग्रहियों पर ब्रिटिश सरकार के अत्याचार, गांधी के सत्याग्रह और अहिंसा की नीति आदि सभी भावनाएँ एक साथ दृष्टिगोचर होती हैं. यह उल्लेखनीय है कि माखनलाल चतुर्वेदी ने प्रत्यक्ष रूप से कोई वीर काव्य नहीं लिखा किंतु जैसा कि उपर्युक्त विवेचन से प्रकट है कि उनके काव्य में अभिव्यक्त क्रान्ति और बलिदान की चेतना प्रकारान्तर से वीर वृत्ति की प्रेरक कही जा सकती है. उनकी " सिपाही " और " जवानी " जैसी

कविताओं को हम इन विशेषताओं से मुक्त पाते हैं और एक प्रकार से इन्हें वीर काव्यों की परम्परा में स्थान भी दे सकते हैं.

सुभद्रा कुमारी चौहान ने ऐतिहासिक पीठिका के माध्यम से सम-सामयिक जनता को जागरूक करने की चेष्टा की है, विशेषतः नारी होने के कारण उन्होंने अपने स्वर में नारियों को अधिक ललकारा है. कवयित्री ने देश की नारियों को कंधे से कंधा मिलाकर चलने का संदेश भी दिया है. वे रानी लक्ष्मी बाई में " दुर्गा " के दर्शन करती हुई वीरता की अवतार की संज्ञा देती है. बलिदान की भावना से आप्लावित " झाँसी की रानी " वीर रस की उत्कृष्ट कृति है. " विजया दशमी " कविता में कवयित्री ने शारीरिक शक्ति के साथ-साथ नारियों के लिए आत्मिक बल की माँग की है एवं सुप्त पुरूषों को नारियों के माध्यम से व्यंग्यपूर्ण शैली में जगाने का सफल प्रयास किया है.

कवयित्री में देश प्रेम और राष्ट्रीयता की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है. " वीरों का कैसा हो बसन्त " शीर्षक कविता में उन्हें ऐतिहासिक पुरूषों और ऐतिहासिक स्थानों की भी स्मृति हो आती है. अतः वे अतीत के बल पौरूष के आदर्श द्वारा वर्तमान पौरूष हीन जाति में प्राणों का संचार किया है. यथा-

" हल्दी घाटी के शिला खण्ड,
ऐ दुर्ग ! सिंह गढ़ के प्रचण्ड,
राणा, ताना का कर घमण्ड,
दो जगा आज स्मृतियाँ ज्वलंत । " 44

इससे स्पष्ट है कि गौरवमय अतीत की पराक्रमशील घटनाओं एवं ऐतिहासिक राष्ट्र पुरूषों की स्मृति को जगाकर वे स्वाधीनता संग्राम का नवोन्मेष करना चाहती हैं. स्वयं कवयित्री ने स्वाधीनता के लिए चलाये गये आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया था. " विजया दशमी " नामक कविता में सुभद्रा कुमारी

चौहान अपनी दासता पर विक्षोभ प्रकट करती हैं, उन्हें वह जन-मन हित-कारी राम राज्य कहीं भी दिखाई नहीं देता. आज सीता रूपी लक्ष्मी रावण रूपी विदेशी के हाथ में पड़ी हुई है और देशवासी बनवासी के रूप में भटकते फिर रहे हैं. कवयित्री रूपक द्वारा जहाँ आधुनिक काल की अवनति का दृश्य प्रस्तुत करती हैं वहाँ अतीत का गौरव भी उसकी आँखों से ओझल नहीं होता --

" हो असहाय भटकते फिरते बनवासी से आज सखी ।
सीता लक्ष्मी हरी किसी ने गयी हमारी लाज सखी ।
× × ×
वह दिन था, जब दिया किसी ने रण में जरा प्रचार सखी,
मिटा दिया यम को भी हमने, हुआ हमारा वार सखी । " [4]

कवयित्री का हृदय देश प्रेम से ओत प्रोत है . मातृ मंदिर की पुकार उस प्रेम पुजारिन को व्याकुल कर देती है और वह प्राणों का उपहार लेकर जननी की दर्शनार्थ मातृमंदिर में उपस्थित हो जाती है.

इस प्रकार सुभद्रा कुमारी चौहान ने पूर्ण रूपेण सांस्कृतिक पुनर्जागरण , राष्ट्रीय आंदोलनों से प्रेरणा ग्रहण कर राष्ट्रीय और देशभक्ति की वीर रस परक रचनाओं की रचना की. इनकी वीर रस पूर्ण कविताओं में ज्वलन्त राष्ट्रीय चेतना का स्वर अधिक मुखर है. " झांसी की रानी " की इनकी सुप्रसिद्ध कविता को निश्चय ही वीर काव्यों की परंपरा में स्थान दिया जा सकता है. इसी प्रकार " विजया दशमी " शीर्षक कविता भी वीरता के आह्वान को उद्भाषित करती है. शेष रचनाएँ वीर काव्य की कोटि में भले ही नहीं आती किंतु अप्रत्यक्ष रूप से वीर वृत्ति की पोषक अवश्य कही जा सकती हैं ।

बालकृष्ण शर्मा " नवीन " कवि के साथ-साथ स्वतंत्रता सेनानी के रूप में सुप्रसिद्ध हैं. सन् 1921 के आन्दोलन के समय कवि ने " विप्लव गायन "

की रचना की, इस रचना में क्रान्तिकारी सूत्र तथा महात्मा गांधी की प्रेरणा एकत्रित हो गयी है, इसमें क्रान्तिकारी कवि ने विध्वंस का संदेश सुनाया है, कवि का विश्वास है कि आज की व्यवस्था को मिटाये बिना शान्ति एवं समता भी असंभव है --

" प्राणों के लाले पड़ जायें त्राहि-त्राहि रव भू में छाएँ ।
नाश और सत्यानाशों का धुवांधार जग में छा जाए ।।
नियम और उपनियमों के बंधन टूक-टूक हो जाएँ ।
विश्वंभर की पोषक वीणा के सब तार मूक हो जायें ।। " 46

वर्तमान युग के कवियों की राष्ट्रीय कविताओं में बलिदान का स्वर विशेष रूप में उद्घोषित हुआ है, देश भर में राजनैतिक हलचल हो रही थी, ज्यों-ज्यों शासन का दण्ड कठोर होता जाता था त्यों-त्यों देशवासियों में राजनैतिक क्रान्ति की भावना तीव्रतर होती जा रही थी, सरकार की ओर से दी जा रही यातनाएँ देश वासियों को संघर्ष से न रोक सकी, नगर-नगर, गाँव-गाँव से आजादी के परवाने सिर पर कफन बांधे झूमते झामते बलि पथ पर अग्रसर हो रहे थे, यही बलिदान की उमंग ही इस युग की कविताओं की विशेषता है, इनकी " शिखर पर " शीर्षक कविता में बलिदान की एक ज्वलन्त उत्तेजना विद्यमान है, 47

देशभक्तों के कठिन संघर्षों का प्रदर्शन सामान्य जनता में उत्तेजना निर्माण कर उसमें शासन के प्रति घृणा के भाव जाग्रत करने में सहायक होता है, शहीदों के शोणित की लाली ही हो देशवासियों को प्रकाश देकर उन्हें राष्ट्रोद्धार के लिए मर मिटने का मूक संदेश देती है, अतएव देश भक्तों तथा नेताओं के प्रशस्ति गान, जन जाग्रति के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होते हैं, नवीन जी सत्याग्रहियों के कारावास का वर्णन करते कहते हैं--

" ताला, कुंजी, लालटेन,
जंगला, कैदी, ये सब हैं ठीक,

खींच चुकी है नौकर शाही
अपने सर्वनाश की लीक ।
× × ×
तेरी चक्की के ये गेहूँ
पिसते हैं- पिस जाने दे,
चक्की पिसवाने वाले को
मिट्टी में मिल जाने दे । " 48

इस प्रकार नवीन जी ने अपनी रचनाओं में ओज एवं स्फूर्ति द्वारा भारतीयों को उनकी दासता का बोध कराते हैं और उन्हें उनकी पददलित अवस्था से अवगत कराकर साम्राज्यवादी शोषण का अंत करने के लिए उनमें क्रांतिकारी भावों की सृष्टि करते हैं. संक्षेप में उनकी रचनाओं में विद्रोह का स्वर सर्वत्र विद्यमान है जो वीर वृत्ति का उत्प्रेरक कहा जा सकता है, किन्तु वीर काव्यों की कोटि में स्थान देनेवाली उनकी कोई महत्वपूर्ण कृति लेखिका के देखने में नहीं आ सकी है.

श्री श्यामलाल गुप्त पार्षद जी भी छायावादी युग में राष्ट्रीय और देशभक्ति परक काव्य रचना के एक सशक्त कवि हैं जिन्होंने समय-समय पर अनेक सत्याग्रह आन्दोलनों में भाग लिया. राष्ट्रीय प्रेम का जो उदाहरण ये रचनायें प्रस्तुत करती हैं उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि यह तेजस्वी एवं व्रती कवि साधना के क्षेत्र में पूर्ण लगन के साथ अपनी कलम चलाता रहा है. कवि की आक्रोश, उत्साह, बलिदान, साहस एवं स्वातंत्र्य चेतना से परिपूर्ण लगभग सारी कवितायें राष्ट्रीयता पर केन्द्रित हैं. कवि राष्ट्रीय शक्ति से पूर्ण रूपेण आश्वस्त हैं. नेताओं की झण्डागायन के लेखक श्री श्यामलाल गुप्त पार्षद जी ने राष्ट्रीय आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया था जो हमेशा ग्राम-ग्राम, नगर-नगर घूमकर जनता को ब्रिटिश साम्राज्य से लोहा लेने को तैयार करते रहे हैं. इस कार्य के लिए यदि उन्हें सरकारी कोप का भी भाजन बनना पड़ा तो उसे

भी उन्होंने सदैव हँस हँसकर झेला है. इनकी वीर रसीय राष्ट्रीय काव्यधारा की प्रथम प्रवृत्ति भारत माता के प्रति पूज्य भावना है जिसमें मातृभूमि के प्रति सम्मान, श्रद्धा की भावना, वन्दना उसके लिए बलिदान की भावना से संबंधित कवितायें इस कोटि में आती हैं. दूसरी प्रवृत्ति में विदेशी शासन के प्रति असन्तोष तथा राजनीतिक स्वतंत्रता की भावना है. इसमें समय-समय पर होने वाले आंदोलनों तथा स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा किये गये प्रयासों का एवं बलिदानों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है. तीसरी प्रवृत्ति उनकी गौरवमय अतीत के प्रेरक प्रसंगों से संबंधित रचनाओं में दिखाई पड़ती है. चतुर्थ प्रवृत्ति वीर पूजा की मनोवृत्ति की है जिसमें युग पुरूषों के कार्यों का प्रेरणादायी वर्णन किया है. ये चारों प्रवृत्तियाँ अत्यधिक मात्रा में दृष्टिगोचर नहीं होती.

पार्षद जी स्वतन्त्रता प्राप्ति के तक राष्ट्रीय आंदोलनों में जूझते रहे और अवकाश के क्षणों में तथा संघर्षकाल में भी अपनी सहज सांसों को काव्य में वर्णित करते रहे. 1918-19 से लेकर 1947 तक कवि गांधी का व्रत धारण लेकर जीवन में अपने काव्यों द्वारा नवीन चेतना जगाते रहे. यही कारण है कि " विजयी विश्व तिरंगा प्यारा " का झण्डा गायन उनके मुंह से मार्च 1924 ई० में मुखरित हुआ और कांग्रेस की मोहर लगने के पश्चात् सम्पूर्ण भारत में ﴾पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण﴿ तक पूरे देश के कण्ठ-कण्ठ से गूंजी और सत्याग्रही वीरों को उत्साह प्रदान करता रहा. " विनय एवं याचना " नामक कविता में मातृभूमि के प्रति श्रद्धा अर्पित कर उसे वीर पुरूषों को जन्म देने के लिए कहा गया है. महात्मा गांधी जिस समय खिलाफत आंदोलन द्वारा जनता में अभूतपूर्व चेतना जगा रहे थे उस समय पार्षद जी ने आगरा के कारावास में थे और " वही "समान है " कविता लिखी. " संकट " नामक कविता सन् 1921 में मलाका जेल की तनहाई में रहकर लिखी गयी है, एवं सन् 1921 में ही गांधी जी द्वारा स्वराज्य घोषणा करने पर प्रसन्नता में लिखी की अब स्वतंत्रता शीघ्र ही मिल जायेगी.

उनकी वीर रस परक राष्ट्रीय चेतना की कवितायें " समान है ", " नेहरु जी का स्वागत गान ", (1930 ई0 ), पावक-पुंज में पंकज-फूल्यौ (1933), " लाला लाजपतराय के प्रति " और " सम्मान " आदि हैं. " समान है " कविता में कवि ने युगीन परिस्थिति को इतने सशक्त एवं स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत कर दिया है कि उससे इन पंक्तियों में समकालीन जन-जीवन का संक्षिप्त परन्तु स्पष्ट चित्र दृष्टिगोचर हो जाता है. संघर्षशील घड़ियों में कवि के साथ समस्त जन जीवन आशा निराशा के झोंकों में बह रहा था उस समय कवि का यह आत्म विश्वास " होएगी इतिहास अमर यह समर कहानी " कलान्तर में सत्य सिद्ध हुआ. कृष्ण यशोदा के पौराणिक स्वरूप को लेकर कवि ने भाव एवं परिस्थिति के चित्रण को और अधिक सजीव बना दिया है. गांधीवादी नीति समझने के लिए यह कविता समर्थ है. उसकी कुछ पंक्तियाँ यहाँ द्रष्टव्य हैं --

" एक लाल है अहा यशोदा भारत माँ के
सत्याग्रह गिरि उठा लिया छिंगुनियाँ लगा के
सात दिवस की शर्त न यदि मघवा ने मानी
होएगी इतिहास अमर यह समर कहानी ।

× × ×

छर्रों की बौछार उधर से आती होगी
इधर खुशी से खुली हमारी छाती होगी
नौकर शाही उधर शक्ति मदमाती होगी
जय-जयकार पुकार इधर से गाती होगी । " 49

" पावक-पुंज में पंकज फूल्यौ में करुण रस और वीर रस का संगम दृष्टिगोचर होता है. स्वर्गीय राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन की अध्यक्षता में सन् 1933 में कानपुर ( फूल बाग) में आयोजित कवि सम्मेलन में यह कविता समस्यापूर्ति में लिखी गयी तो इस सम्मेलन के दो दिन पूर्व काटन में अंग्रेजों द्वारा गोली चलायी गयी थी. एक अबोध बालक की मृत्यु से प्रभावित होकर कवि ने यह कविता लिखी--

" काटन में जबै गोली चली,
    भ्रम से एक बालक मारग भूल्यौ ।
गोली लगी गरे आय गरीब के,
    भूमि गिरयो तलफ्यौ छुकि झूल्यौ ।
दानव एक दशा लखि सो,
    तेहि : झोंकि दियो न दया हिय हूल्यौ ।
बैलट में परयो सोहैं लला,
    जनु पावक-पुंज में पंकज फूल्यौ । " [50]

इन वीर रस परक कविताओं के अतिरिक्त कवि ने " विद्यार्थी जी के प्रति ", " हा देश बन्धु दास ", लाला लाजपतराय के प्रति ", " तिलक का तिलक न कर पाया ", " माण्डले का तपस्वी " आदि युग पुरुषों पर भी कवितायें करके राष्ट्रीय चेतना को जगाया है. इतना ही नहीं इन्होंने अमीरों पर व्यंग्य कसते हुए " रुपया वाले हैं ", " पूँजीपतियों से ", " दलितों पर गानों की ओर " लिखकर वर्ग वैमनस्य पर अपने विचार प्रस्तुत किये हैं. समग्र रूप में यह हम कह सकते हैं कि पार्षद जी की प्रतिभा बहुमुखी रही है वे देशप्रेमी, कर्तव्यनिष्ठ महान आदर्शवादी और धुन के पक्के हैं. इन्होंने वीर रस की रचनाओं की कड़ी में जो वृद्धि की है वह प्रशंसनीय है. उन्होंने राष्ट्रीय चेतना के स्वर को मुखर कर वीर वृत्ति के प्रति भी लोगों का ध्यान आकृष्ट किया.

सोहनलाल द्विवेदी गांधी युग के कवि हैं उन्होंने चिरस्मरणीय अतीत काल ३1920 के बाद३ अपने ओजपूर्ण प्रेरक काव्यों तथा गीतों द्वारा हिन्दी साहित्य, हिन्दी भाषी जनता तथा राष्ट्र की सेवा की जिस प्रकार चेतना को जागृत करने वाले मैथिलीशरण, सियाराम, माखनलाल, नवीन, सुभद्रा आदि को हिन्दी साहित्य भुला नहीं पाता उसी प्रकार सोहनलाल द्विवेदी भी उसके द्वारा याद रहेंगे. नवीन, चतुर्वेदी तथा पार्षद जी की तरह ये भी गांधीजी द्वारा चलाये गये आंदोलनों में सक्रिय भाग लेते रहे यही कारण है

कि द्विवेदी जी के गांधी दर्शन से भावित काव्य में ज्ञान, भक्ति एवं क्रिया का त्रिवेणी संगम हुआ है जिसमें स्नात होकर साधारण प्राणी भी देशभक्त बन सकता है, ऐसा देश भक्त जो तन-मन-धन से राष्ट्र की आराधना के लिए कृत संकल्प हो. [51]

सोहनलाल द्विवेदी की राष्ट्रीय काव्यधारा की प्रमुख प्रवृत्ति विदेशी शासन के प्रति असंतोष तथा राजनीतिक स्वतंत्रता की भावना है. इसमें समय समय पर होने वाले आंदोलनों तथा स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा किये गये प्रयासों एवं बलिदानों की सशक्त अभिव्यक्ति है. दूसरी प्रवृत्ति उनकी गौरवमय अतीत के प्रेरक प्रसंगों से सम्बन्धित रचनाएँ दिखाई पड़ती हैं एवं तृतीय वीर पूजा की भी मनोवृत्ति है. कवि ने गांधी द्वारा प्रचारित खादी को एक जीवन स्फूर्ति के रूप में ग्रहण कर खादी संबंधी विचारों को काव्य रूप प्रदान करते हुए राष्ट्रीय आंदोलनों के लिए उसे उपयोगी सिद्ध किया और इसी के माध्यम से देश प्रेम की भावना जन-मानस में भरी. उनकी सुप्रसिद्ध खादी संबंधी ~~यह~~ कविता राष्ट्रीयता की पूरक है --

कवि को खादी पर इतना विश्वास है कि वे खादी के माध्यम से ही रूठी हुई आजादी प्राप्त करना चाहता है. दांडी यात्रा पर लिखी गयी कविता " चल पड़े जिधर दो डग मग में चल पड़े कोटि उसी ओर " बहुत प्रसिद्ध हुई उसी प्रकार " त्रिपुरी कांग्रेस " में अपनी कल्पना के माध्यम से धरणी के स्तर को चीर कर पुरातन कोशल राज्य के ध्वंस को फिर जीवित कर दिया है. वर्तमान के जननायक और महापुरुषों का गुण कीर्तन के अतिरिक्त कवि ने अतीत के गौरवपूर्ण इतिहास और उसके शूरवीरों का स्मरण भी राष्ट्रीयता की एक कड़ी के रूप में किया है, जब कोई देश वर्तमान में संकट ग्रस्त हो और निराशा एवं विपण्णता के वातावरण से घिरा हो तब उसे अपने स्वर्णिम अतीत से ही आशा की किरण दिखाई देती है. द्विवेदी जी ने भी अपनी कल्पना को अतीत के इतिहास से यदि एक ओर स्वाभिमान की मूर्ति राणा प्रताप से संजोया है तो दूसरी ओर करुणावतार भगवान बुद्ध की निर्मल प्रतिमा

से, स्वतंत्रता पुजारी प्रताप को जगाता हुआ कवि परतंत्रता पर खेद प्रकट करता है और उनमें देश की स्वतंत्रता के लिए मर मिटने का वीरोत्साह है-

" जागो ! प्रताप, मेवाड़ देश के लक्ष्यभेद हैं जगा रहे,
जागो ! प्रताप, माँ बहनों के अपमान छेद हैं जगा रहे,
जागो प्रताप, मदवालों के मतवाले सेना सजा रहे,
जागो प्रताप, हल्दी घाटी में बैरी भेरी बजा रहे । " [52]

राष्ट्रीय ध्वज के प्रति अपनी पूज्य भावनाएँ " जय राष्ट्रीय निशान " नामक कविता में व्यक्त कर देशभक्ति के स्वर को कवि ने ऊँचा उठाया है. प्रत्येक देशभक्त अपने राष्ट्र के गौरव,यश और सम्मान का गान बड़े गर्व से करता है और अपने राष्ट्र ध्वज तक की मान मर्यादा बचाने के लिए हँसते-हँसते बलि हो जाता है -

" मस्तक पर शोणित हो रोली, बढ़े शूरवीरों की टोली
खेले आज मरण की होली, बूढ़े और जवान
जय राष्ट्रीय निशान " [53]

वर्ग संघर्ष के वैषम्य पर ध्यान देता हुआ कवि किसानों को स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जागृत करता हुआ उनमें नवीन चेतना का संचार करता है एवं उसे वीरों का बाहुदंड और योद्धाओं का प्राण कहता है. समग्र रूप से हम कह सकते हैं कि सोहनलाल द्विवेदीजी ने स्वतंत्रता संग्राम में प्रत्यक्ष भाग लेकर राष्ट्रीय आंदोलनों एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण से प्रेरणा ग्रहण कर वीर रस युक्त राष्ट्रीय काव्य के निर्माण में सहयोग दिया.

द्विवेदी युग के कवि मैथिलीशरण गुप्त की लेखनी छायावाद युग में भी निरंतर गतिशील रही है. कवि की इस युग की चेतना में प्रमुख प्रवृत्ति स्वदेश प्रेम, राष्ट्रीयता, वीर पूजा एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण की रही है. इस युग में आनेवाली कवि की रचनायें मुख्यतः विकट भट, वक संहार

(संवत् 1984), स्वदेश संगीत (सं. 1982), हिन्दू (सं.1984), शक्ति (सं.1984), गुरुकुल (सं. 1985), सिद्धराज (सं. 1993) एवं वक संहार (सं. 1924) आदि हैं.

स्वदेश संगीत की मुख्य कविताओं का प्रयोजन " भारत- भारती " की तरह भारतवासियों को जागरण का संदेश देकर स्वतंत्रता के लिए उत्साह जगाना है. " हिन्दू " गुप्त जी की राष्ट्रीय कृति है किन्तु यहाँ इनका दृष्टिकोण सीमित है वे जातीयता से ऊपर नहीं उठ सके हैं यद्यपि यत्र तत्र राष्ट्रीयता के भी दर्शन हो जाते हैं किंतु नाम मात्र को ही. कवि की हिन्दू विषयक धारणा विशद एवं व्यापक है उन्होंने जैन, बौद्ध,अछूत,सिक्खों तक को हिन्दुत्व में अन्तर्भूत करने का प्रयास किया है. इसमें वीर रस का प्रस्फुटन नहीं मिलता. " विकट भट ", " शक्ति ", " सिद्धराज " आदि वीर काव्यों की कोटि में आती हैं. ये तीनों खण्ड काव्य हैं जिनकी संक्षिप्त चर्चा यहाँ प्रासंगिक है.

" विकट भट " वीर रस प्रधान खण्डकाव्य है जो जोधपुर राज की ऐतिहासिक घटना पर आधारित है. इसमें जोधपुर के स्वामिभक्त देवसिंह, उनके पुत्र सबलसिंह तथा पौत्र सवाईसिंह की आत्म बलिदानपूर्ण शौर्य की गौरव गाथा है जो राजपूती आनबान के लिए मर मिटने को उद्यत हो जाते हैं और राजा विजयसिंह को अपनी निर्भीकता, वीर दर्प तथा प्राणोत्सर्ग से प्रवाहित करते हैं अंत में राजा पिता और पुत्र के बलिदान के पश्चात् पौत्र सवाईसिंह का सम्मान करता है. इस काव्य में वीर दर्प पूर्ण व्यक्तित्व के अनेक जीते जागते चित्र अंकित हुए हैं जिनमें से एक उदाहरण यहाँ पर्याप्त होगा --

निर्भय मृगेन्द्र जया करता प्रवेश है-
वन में ज्यों, डाले बिना दृष्टि किसी ओर त्यों,
भोर के भभूके सा, प्रविष्ट हुआ साहसी

बाल वीर, मन्द-मन्द धीर गति से धरा
मानों धसी जाती थी, वदन गंभीर था । " [54]

देवी दुर्गा और शुण्ड, निशुम्भ के साथ हुए युद्ध की कथा को लेकर " शक्ति " खण्डकाव्य की रचना हुई. वस्तुत: यह जयभारत का एक भाग है जो आगे चलकर स्वतंत्र रूप में प्रकाशित हुआ है.

" सिद्धराज " गुजरात की गौरव गाथा को प्रस्तुत करने वाला वीर रस पूर्ण खण्ड काव्य है जिसका नायक जयसिंह है. जयसिंह शूरवीर, साहसी, धीरोदात्त मातृभक्त और प्रेमी व्यक्तित्व से सम्पन्न है. संपूर्ण कथानक में श्रृंगार वीर रस का सहायक बनकर आया है और कहीं-कहीं पर प्रेरक भी कहा जा सकता है. इस काव्य में भारतीय संस्कृति के प्रति गौरव भावना भी व्यक्त हुई है. [55]

राष्ट्र कवि दिनकर ने यद्यपि परवर्ती कालों में अपनी लेखनी तीव्रता से चलाई है इस युग में भी इनकी प्रसिद्ध कृति " प्रण भंग " प्रकाश में आयी जिसमें कवि ने महाभारत को कथा का आधार बनाकर भीष्म पितामह के भीषण युद्ध एवं कृष्ण के शस्त्र उठाने की घटना को लिया है. इसके खण्ड काव्य में भक्तवत्सलता को ही प्रमुखता दी गयी है. भीष्म के ओज, साहस, वीरत्व का रूप स्पष्टत: दिखाई देता है.

इसके अतिरिक्त वियोगी हरि द्वारा रचित " वीर सतसई " भी छायावादी युग में ही रची गयी है. ब्रजभाषा में रचित इस कृति में कवि ने वीर, वीरता, युद्धवीर, दान, धर्म सभी पक्षों को स्पर्श किया है. कृष्ण भी इसमें श्रृंगार प्रेमी न होकर वीर रूप में ही अवतरित हुए हैं.

अत: पूर्ववर्ती अध्याय के वीर काव्यों के प्रेरणा स्त्रोतों के विषयक विवेचन के प्रकाश में यह कहा जा सकता है कि इसकी रचना के पीछे सांस्कृतिक पुनर्जागरण एवं अतीत के प्रति गौरव की भावना प्रेरक चेतना के रूप में रही है.

पूर्ववर्ती पृष्ठों में छायावाद युग के वीर काव्यों तथा उनकी भूमि को न्यूनाधिक रूप में स्पर्श करने वाली राष्ट्रीय सांस्कृतिक रचनाओं का जो विवेचन प्रस्तुत किया गया है उसके आधार पर चार खण्ड काव्यों के अतिरिक्त लगभग 40 छोटी- बड़ी कविताएँ प्रकाश में आती हैं. वीर काव्यों के विषय में यथा स्थान विवेचन प्रस्तुत किया गया है जिससे स्पष्ट है कि इनकी रचना की पृष्ठभूमि में अतीत के प्रति गौरव भावना जो कि राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का परिणाम कही जा सकती है की चेतना वर्तमान रही है. समग्रतया विचार करने पर हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचते हैं.

पूर्ववर्ती विवेचन के आलोक में हम कह सकते हैं कि छायावादी काव्य में स्वतः यथार्थ के प्रति सचेष्ट आग्रह, सामाजिक यथार्थ की प्रतिष्ठा, आंचलिक जीवन के सजीव चित्र, राष्ट्रीयता में दृढ़ता एवं विकास के प्रखर स्वर स्पष्ट दिखाई देते हैं. इस कालकी वीरता विध्वंस को लक्ष्य करके नहीं चलती, न आज शत्रु को पीड़ित,अपमानित या पददलित करने में हम अपने वीर काव्यों की इतिश्री समझते हैं. शत्रु के व्यक्तित्व के विरुद्ध नहीं, उसकी नीति के विरुद्ध ही हमारे युद्ध की घोषणा होती है. व्यक्ति से तो आज सारा संसार हमारा बंधु है- एक ही विराट से उत्पन्न सहोदर , विश्व-बंधुत्व का यह आदर्श छायावाद में मुखरित परिलक्षित होता है.

दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि छायावादी काव्य में चित्रित वीर भावना का प्रबल रूप उन कविताओं में भी मिलता है जहाँ आत्म बलिदान के प्रति उत्साह व्यक्त किया गया है. इस काल में लिखी गयी रचनाओं में राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के रागात्मक पक्ष का चित्रण यथासंभव हुआ है. स्वतंत्रता के लिए हुए आन्दोलन भी देश प्रेम का ही परिणाम हैं. कवि ऐसे महापुरुषों की प्रशस्ति गाता है जो राष्ट्र और मानवता को समेट कर चले .

तीसरा तथ्य यह ध्यातव्य है कि कवियों ने सत्याग्रहियों के प्रयाण गीत, उनकी दिनचर्या, चरखे खादी अहिंसा आदि विषयक गीतों की

गतिविधियों के सूक्ष्म चित्र ही अंकित किए हैं, यद्यपि ये वीर काव्यों की कोटि में नहीं आते हैं. अतः स्पष्ट है कि इन कविताओं ने स्वतंत्रता की व्यापक भावना का ही विशद चित्रण किया है. इस युग में ही देश भक्ति से ओत प्रोत राष्ट्रीय काव्य की रचना हुई है. ये रचनायें आज भी सहृदयों को रसमग्न कर उनमें राष्ट्रीय चेतना का संचार करती हैं.

## प्रगतिवाद युग -

हिन्दी काव्य क्षेत्र में छायावाद युग के पश्चात् प्रगतिवाद युग का प्रारंभ होता है. सन् 1936 से 1947 अर्थात् स्वतंत्रता प्राप्ति तक इस युग की सीमावधि स्वीकार की जा सकती है. लखनऊ में " प्रगतिशील लेखक संघ " का प्रथम अधिवेशन हुआ और इसके पहले सभापति प्रेमचंद जी ने अपने भाषण में साहित्य में तीव्रता से बढ़ रही प्रेम एवं वेदना की लहर की आलोचना की. उन्होंने कहा कि साहित्य केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं हैं. आधुनिक काल में जब हमारा समाज एवं देश संकटकालीन अवस्था से गुजर रहा है तो हमें ऐसा साहित्य निर्मित करना चाहिए जिसमें वर्तमान विपन्नावस्था का प्रतिबिम्ब हों और उससे प्राण पाने के लिए आशापूर्ण संदेश निहित हो. " नीतिशास्त्र और साहित्यशास्त्र का लक्ष्य एक ही है- केवल उपदेश विधि में अंतर है. नीतिशास्त्र तर्कों और उपदेशों के द्वारा बुद्धि और मन पर प्रभाव डालने का यत्न करता है, साहित्य ने अपने लिए मानसिक अवस्थाओं और भावों का क्षेत्र चुन लिया है. -- मुझे यह कहने में हिचक नहीं है कि मैं चीजों की तरह साहित्य को भी उपयोगिता की तुला पर तौलता हूँ --- फूलों को देखकर हमें इसलिए आनन्द होता है कि उसमें फलों की आशा होती है कि उसमें फलों की आशा होती है. "[56] प्रेमचन्द जी के भाषण के अंतिम वाक्य पर अगर हम ध्यान दें तो हमें प्रगतिवादी काव्य सिद्धान्त की उपयोगितावादी का पता लग जाता है.

प्रगतिवाद की स्पष्ट और प्रारंभिक दशा की झलक जुलाई सन् 1938

में श्री सुमित्रानन्दन पन्त और श्री नरेन्द्र शर्मा के संपादकत्व में निकलने वाले कालाकांकर के मासिक पत्र " रूपाभ " में मिली, जो थोड़े ही दिनों के बाद बंद हो गया. इधर प्रगतिवाद की विशद व्याख्यायें और रचनायें काशी के " हंस " में व्यवस्थित रूप से प्रकाशित होने लगीं, जब से ( सन् 1941 ) उसके सम्पादक श्री शिवदान सिंह चौहान हुए. इस बीच प्रगतिवाद की चर्चा अन्य पत्र पत्रिकाओं में भी होती रही. हिन्दी साहित्य के पूना अधिवेशन में पंडित नंददुलारे वाजपेयी ने हिन्दी काव्य की इस नवीन प्रवृत्ति पर विस्तृत प्रकाश डाला है. [57]

मार्क्स के भौतिकवाद से प्रभावित होकर रचनायें करने वालों में पंत जी सबसे आगे आये. भौतिकवादी विचारों को लक्ष्य में रखकर पहले पहल इनकी " युग वाणी " का प्रकाशन हुआ. इसके बाद इन्हीं की " मानव पशु " एवं रामविलास शर्मा की " कलियुग " और " हड्डियों का ताप " नामक कवितायें प्रकाशित हुई. " रूपाभ " के अंकों में पंत जी की कभी-2 नये ढंग की रचनायें एक साथ प्रकाशित होती थीं, जिस कारण बहुत से नवयुवक कवि इस ओर आकृष्ट हुए. नवीन काव्य की मूल विचार धारा का परिचय पहले पहल पंत जी ने ही दिया. अतएव हिन्दी में प्रगतिवादी काव्य का सूत्रपात करने वाले वही कहलाते हैं और प्रगतिवादी युग का प्रारंभ हम सन् 1936 से मान सकते हैं. आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास में सन् 1936 का वर्ष अत्यन्त गौरवपूर्ण और महत्वपूर्ण है क्योंकि इस समय एक ओर छायावाद अपने पूर्ण यौवन पर था और दूसरी ओर उसका यौवन ढलने की प्रक्रिया भी आभासित होने लगी थी. " आरम्भ में मानवतावाद मानवता के शोषण और बन्धन से मुक्त करने के महान् और उदार आदर्शों से चालित हुआ था. तत्व चिन्तकों और साहित्य मनीषियों के मन में इस आदर्श का रूप बहुत ही उदार था पर व्यवहार में मनुष्य की उदारता केवल एक ही राष्ट्र के मनुष्यों की मुक्ति तक सीमित होकर रह गया. धीरे-धीरे राष्ट्रीयता नामक नवीन देवी का

जन्म हुआ. यह एक हद तक प्रगतिशील विचारों की ही उपज है. " [58]

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी राजनीतिक संघर्ष का नेतृत्व करने के साथ ही साथ रचनात्मक कार्यों को भी चला रहे थे. मानवता विरोधी सामाजिक रूढ़ियों को महाव्याधि समझकर उनकी चिकित्सा कर रहे थे. गांधीजी अछूतोद्धार, पीड़ितों की सेवा, ग्राम संगठन, किसान मजदूरों का उन्नयन इत्यादि सभी समाज सुधार और देशोत्थान की समस्याओं का समाधान कर रहे थे. जिसके परिणामस्वरूप जनता जागरूक हो रही थी. मध्य वर्ग एवं निम्न वर्ग अपने अधिकारों के प्रति भी सजग हो रहे थे. पूँजीवादी व्यवस्था होने के कारण भारतीय किसान निरन्तर पिस रहा था तथा दूसरी ओर मार्क्सवाद साम्यवादी पद्धति से निरन्तर आगे बढ़ता जा रहा था. पूंजीवादी विषमता से पीड़ित संसार का मध्यम और निम्न वर्ग मार्क्सवाद की ओर आकर्षित हो गया. पूंजीवादी सामाजिक विषमता, छायावादी आत्मनिष्ठा, निराशावाद, कल्पनाप्रियता और सौन्दर्यप्रियता के विद्रोह के फलस्वरूप एक नयी काव्यधारा का जन्म हुआ. यही काव्य धारा राजनीतिक क्षेत्र में साम्यवाद, सामाजिक क्षेत्र में साम्यवाद, दर्शन के क्षेत्र में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और साहित्य में प्रगतिवाद कहलायी. इस वाद से प्रभावित होकर छायावादी कवि छायावाद की शीतल एवं ठंडी, सुहावनी एवं मनमोहनी छाँव को छोड़कर प्रगतिवाद की प्रखर तेज धूप में आकर खड़े हो गये. समाज का यथार्थ चित्र उतारना ही साहित्य की कसौटी बन गया.

रामधारी सिंह " दिनकर " " चक्रवाल " की भूमिका में कहते हैं " सभ्यता का कल्याण इस बात में है कि मनुष्य प्रत्येक क्षेत्र में संतुलित रहने का प्रयत्न करें. किन्तु छायावाद या रोमांटिसिज्म संतुलन की स्थिति में कम रह पाता है. उत्साह की बात आने पर रोमांटिक कवि अंधी वीरता अथवा अंधी क्रान्ति पर पहुँच जाता है तथा पस्ती की मनोदशा में वह निराशा को सौन्दर्यपूर्ण, आंसू को श्रेष्ठ सर्वस्व और मृत्यु को

अपना उद्धारक मान लेता है ।" [59]

कुछ लोगों के मतानुसार प्रगतिवादी कविता व्यक्तिवादी कविता है. किन्तु इसका वर्गवाद मानव को एक समान करने के लिए ही तो है. वर्ग इस वाद ने नहीं बनाये बल्कि ये वर्ग तो पहले से ही उपस्थित थे. समाज का जो सबसे दलित एवं निर्बल वर्ग था उसी को इस धारा ने काव्य का नायक बनाया. प्रगतिवाद के कवियों ने समानता लाने के लिए सर्वहारा नंगे भूखे दु:खी प्राणियों के चित्र उपस्थित किये. प्रगतिवाद को मूलत: छायावाद की प्रतिक्रिया के रूप में स्वीकार किया जाता है. जैसा कि हम पूर्ववर्ती विवेचन में स्पष्ट कर चुके हैं.

" प्रगतिवाद " शब्द काव्य के क्षेत्र में सामान्य रूप से आजकल दो अर्थों में प्रयुक्त होता है. एक तो सामान्य राष्ट्रीय और सामाजिक कविताओं के लिए और दूसरे मार्क्सवादी विचारधारा से अनुशासित रचनाओं के लिए. पहले ढंग की रचनाओं के अंतर्गत देशभक्ति के उद्‌गार, अतीत और वर्तमान देशभक्तों एवं राष्ट्र नायकों की प्रशस्तियाँ, तथा देश की वर्तमान राजनीतिक और सामाजिक अवनति का दिग्दर्शन कराने वाली क्षुब्ध मनोदशा से भरी रचनायें आती हैं. दूसरे ढंग की रचनाओं की भी दो कोटियाँ दिखाई देती हैं. एक तो कम्युनिष्ट पार्टी का दलगत साहित्य [Party Literature] जिसमें रूसी कम्यूनिस्ट पार्टी की नीति को ही सर्वोपरि महत्व दिया जाता है. दूसरी वे कृतियाँ जिनमें मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की स्वीकृति तो अंतर्निहित रहती है पर कम्यूनिस्ट पार्टी की नीति का बंधन जिसे स्वीकार नहीं, इस प्रकार कुल मिलाकर प्रगतिवादी काव्य धारा के अन्तर्गत तीन प्रकार की रचनायें मिलती हैं. -

[क] सामान्य रूप से राष्ट्रीयता या स्वतंत्रता की भावना से युक्त और सामाजिक असंगतियों की व्यंजना करने वाली.

[ख] मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित आर्थिक संघठन के परिपार्श्व में वर्तमान समाज व्यवस्था को रखकर प्रगति का पथ निर्धारित करने वाली.

---

§ग§ कम्युनिस्ट पार्टी की नीति का प्रचार करने वाली.

प्रगतिवादी काव्यधारा का पहला स्वर सामाजिक है, तो दूसरा महत्वपूर्ण स्वर राजनीति का है. राजनीति हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रवेश पा चुकी है. वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण कई साधन उपलब्ध हो गये हैं. जिसके फलस्वरूप दूर-दूर से राष्ट्र भी समीप हो गये हैं. यही कारण है कि प्रगतिवादी कविता का राजनीतिक स्वर अन्तर्राष्ट्रीय है. आज मानवता परतंत्रता और साम्राज्यशाही के चंगुल में फंसी हुई है इस वाद की कविता इसका व्याख्यान करती है.

प्रगतिवाद की इस नयी चेतना के साथ-साथ इस युग में राष्ट्रीय आन्दोलन तथा क्रान्तिकारी प्रयास भी निरन्तर गतिशील रहे. अतः वीर काव्यों की परम्परा केवल प्रगतिवाद से सम्बन्धित नहीं है. युद्ध वीरता के अतिरिक्त महात्मा गांधी की कर्म वीरता भी प्रतिष्ठित हो चुकी थी, जिसमें धैर्य एवं साहस की अवस्थिति से वीरवृत्ति का पोषण होता है. सन 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन एवं सुभाषचन्द्र बोस द्वारा आयोजित आजाद हिन्द सेना के अभियान इसी युग में आते हैं. अतः हम युग की काव्य चेतना को मार्क्सवादी तथा दूसरी ओर पहले से चली आती हुई राष्ट्रीय - सांस्कृतिक अभियानों से जुड़ा हुआ पाते हैं.

कहने को तो " भारत-भारती " के रचयिता मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा " नवीन ", रामधारी सिंह " दिनकर " आदि प्रगतिवाद की उपरनिर्दिष्ट भूमि से कोई संबंध नहीं है, व्यापक अर्थों में भले ही इन्हें प्रगतिशील कहा जा सकता है. प्रगतिवाद की मूल धरती पर जन्म लेने वाले कवियों की पीढ़ी में केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, त्रिलोचन शास्त्री, रांगेय राघव तथा रामविलास शर्मा आदि है जिन्हें प्रगतिवादी कवि के नाम से पुकारा जाता है.

केदारनाथ अग्रवाल छायावादी भावभूमि से विकसित होकर " युग की गंगा " तक पहुँचे हैं. " युग की गंगा " में उनकी जनवादी आकांक्षाएँ

और गुप्त अन्तर्विरोध अभिव्यक्त हुए हैं. [60] इन्होंने जन जीवन की कठोरता, संघर्ष, आर्थिक वैषम्य आदि को यथार्थवादी ढंग से चित्रित किया है तो नागार्जुन साम्राज्यवाद की संस्कृति के विनाश में विश्वास करते हैं इनके काव्य में मजदूर की संघर्षशील चेतना समुन्नत होकर अभिव्यक्त हुई है. नरेन्द्र शर्मा आधुनिक हिन्दी काव्य में एक शक्ति हैं. समाज सुख के वे स्रष्टा हैं. इनके काव्य में यथार्थवाद की गहराई दृष्टिगोचर होती है. देश की दरिद्रता, पाखण्ड शोषण, दुर्दशा और वीभत्सता को उन्होंने स्पष्ट स्वर दिया है जो जो पूर्ववर्ती वीर काव्य के प्रेरणास्त्रोत आधुनिक नवजागरण से जुड़ी हुई है.

त्रिलोचन शास्त्री की कविता में धरती की गंध और सहजता है. उनकी कविताओं में व्यक्तिगत कुंठा, अवसाद तथा पीड़ा को व्यापक सामाजिक भूमिका प्राप्त हुई है. नागार्जुन की सारी कविता यथार्थ की ठोस भूमि पर आधारित है, वह कहीं भी कल्पना और अतिशयता में नहीं भटके हैं. समाज तथा जनता के सजग पहरुए की भाँति उनकी दृष्टि ने सामायिक जीवन के प्रत्येक स्तर का स्पर्श कर यथार्थ को ही मूर्तिमान किया है. शोषक सामराज्य वादियों पर, जर्जर-रूढ़ियों एवं रीति रिवाजों पर नागार्जुन के व्यंग्य बज्र बनकर टूटे हैं. सीधी सादी बोलचाल की भाषा में इस कवि ने जनता के हित के लिए काव्य रचना की है.

रांगेय राघव स्तालिनग्राद पर हुए नाजियों तथा फासिस्टों के हमलों की तीखी प्रतिक्रिया को लेकर उस समय हिन्दी कविता के मंच पर अवतीर्ण हुआ था, जिस समय ऐसी कविताओं का अम्बार लग गया था. रांगेय राघव ने लाल सेना तथा रूस की वीर जनता को उसका गौरव प्रदान करने के साथ-साथ फासिस्ट आक्रमण की बर्बरता को उभारते हुए रूसी जनता के अदम्य शौर्य तथा आत्म बलिदान का संबंध सीधे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा साम्राज्यवादी बन्धनों को तोड़ने के लिए उसी प्रकार के शौर्य तथा आत्म बलिदान को सूचित करने वाली भारतीय जनता के साथ स्थापित कर सभी का ध्यान इस नवीन चेतना की ओर लगाया. यही नहीं जनमानस के शोषण

का चित्रण भी कवि ने बड़ी निपुणता से खींचा है.

द्विवेदी युग में निरन्तर लेखनी चलाने वाले कवि छायावादी युग में एवं तदुपरान्त प्रगतिवादी युग में भी अपनी काव्य कृतियाँ प्रदान करते रहे हैं . कवि की इस युग की चेतना में भी प्रमुख प्रवृत्ति राष्ट्रीयता, स्वदेश प्रेम, सांस्कृतिक पुनर्जागरण एवं वीर पूजा की रही है. इस युग में आने वाली कवि की वीर रस युक्त प्रमुख रचनायें "स्वदेश संगीत एवं मंगल घट " है. दोनों में ही निवेदन, भारतवर्ष, मातृभूमि, स्वर्ग सहोदर, मेरा देश, स्वप्नोत्थित, कर्तव्य, भारत वर्ष, बाजी प्रभु देश पाण्डे आदि राष्ट्रीयता की भावना से ओत प्रोत हैं. " मंगल घट " में संग्रहीत पृथ्वीराज का पत्र, नकली किला एवं विकट भट वीर रस के उत्कृष्ट नमूने हैं. नकली किला में नरेश लालसिंह की विचित्र अपमान भावना और उसके फलस्वरूप उत्पन्न शोकजनक कांड की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है. मानापमान के अतिरंजित दृष्टिकोण अथवा प्रतिशोध की भावना ने भारत के राष्ट्रीय और सामाजिक जीवन को कितना दोषित किया है, इसी तथ्य को दर्शाने का सफल प्रयास नकली किला में किया है. वीर कुम्भ की वीर दर्पपूर्ण उक्ति का एक उदाहरण यहाँ पर्याप्त है-

" सावधान ! यहाँ न आना, दूर ही रहना वहीं,
देखना, निज बाण मुझको छोड़ना न पड़े कहीं,
भृत्य होने से तुम्हारा मैं जताने को रहा,
अन्यथा कब का यहाँ पर दीखता शोणित बहा ।

× × ×

है न कुछ चित्तौर यह, बूंदी इसे मानिये,
मातृभूमि पवित्र मेरी पूजनीया जानिये ।
कौन मेरे देखते फिर नष्ट कर सकता इसे ?
मृत्यु माता की जगत में सह्य हो सकती किसे ? " 61

पूर्ववर्ती छायावादी विवेचन में हम कह चुके हैं कि अतीत के स्वर्णयुग का सहारा लेकर पुनरूत्थान परक भावनाओं द्वारा राष्ट्रीय जागरण का शुभारंभ कुछ कवियों ने किया. अतीत के गौरव का बोध निराला के " तुलसीदास " के रचनाकाल के समय भारतकी राजनीतिक परिस्थिति डाँवाडोल थी एवं पाश्चात्य संस्कृति हमारी संस्कृति पर अवांछनीय प्रभाव डाल रही थी. इसलिए देशवासियों को पाश्चात्य प्रभाव से मुक्त करने, उत्थान कर सच्चा मार्ग दिखाने की आवश्यकता थी. निराला ने " तुलसीदास " के माध्यम से यही प्रेरणा देशवासियों को दी है किन्तु यह कृति वीर काव्यों की कोटि में नहीं आती. निराला की " अणिमा " में तीन प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं, एक भक्ति की, दूसरी विषाद दुःख या करुणा की तथा तीसरी प्रशस्ति की. इसमें प्रमुखयत: राष्ट्रीयता और मानवतावादी स्वर ही प्रस्फुटित हुआ है. इसके साथ ही कवि ने महान आत्माओं सन्त रविदास, आचार्य शुक्ल, प्रसाद, बुद्ध, विजयालक्ष्मी पंडित महादेवी आदि को अपनी श्रद्धांजलियाँ भेंट की हैं. इस प्रकार इस युग में उनकी रचनायें प्राय: समसामायिक विषयों पर आधारित है.

छायावादी युग में हम कह चुके हैं कि माखनलाल चतुर्वेदी जी ने राष्ट्रीय आंदोलनों द्वारा भारतीय जनता में आत्मगौरव का ओजस्वी उद्बोधन देकर भारतीयों में उत्साह जगाया. कवि ने प्रत्यक्ष रूप में कोई वीर काव्य नहीं लिखा है किन्तु काव्य में अभिव्यक्त क्रान्ति और बलिदान की चेतना वीर वृत्ति की प्रेरक कही जा सकती है. यथा-

" क्या वीणा की स्वर लहरी का सुनूँ मधुरतर नाद ?
छिं ! मेरी प्रत्यंचा भूले अपनायह उन्माद !
क्या तुमको है कुरुक्षेत्र हल्दी घाटी की याद !
सिर पर प्रलय, नेत्र में मस्ती, मुट्ठी में मन-चाही.
लक्ष्य मात्रा मेरा प्रियतम है मैं हूँ एक सिपाही । " 62

कवि ने अतीत का सहारा लेकर सैनिक को संदेश दिया है कि उसके सम्मुख केवल उसका साहस होना आवश्यक है और वह है स्वतंत्रता की भावना. हिमकिरीटिनी में वीर रस की कविता में राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत हैं.

नवीन की कुंकुम संबंध राष्ट्रीय कविताओं में कवि का आक्रोश ही मुख्यतः मुखरित हुआ है. इसमें सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक जीवन के उत्थान में योगदान करने वाले उन्नायकों के प्रति कवि की श्रद्धांजलियाँ, सत्याग्रहियों के कारावास का वर्णन, बलिदान होने की ज्वलन्त उत्तेजना है. विद्रोह के स्वर को हम वीर वृत्ति का प्रेरक कह सकते हैं. जैसा कि " विप्लव गायन " में स्पष्ट है -

" प्राणों के लाले पड़जाएँ त्राहि-त्राहि रव में छाए
नाश और सत्यानाशों का धुँवाधार जग में छा जाए ।।
नियम और उपनियमों के ये बन्धन टूक-टूक हो जायें,
विश्वम्भर की पोषक वीणा के तार मूक हो जायें ।। " [63]

सोहनलाल द्विवेदी गांधी युग के एक प्रमुख कवि हैं और गांधी जी द्वारा चलाये आंदोलनों में भाग भी लेते रहे हैं, जैसा कि हमने पूर्ववर्ती विवेचन में कहा है. इस युग में भी कवि ने अपनी लेखनी चलायी है और कवि के काव्य की प्रमुख प्रवृत्ति विदेशी शासक के प्रति असंतोष तथा राजनीतिक स्वतंत्रता की भावना, इस युग में होने वाले आंदोलनों तथा नेताओं द्वारा किये गये प्रयासों एवं बलि भावना की सशक्त अभिव्यक्ति है. दूसरी प्रवृत्ति अतीत के प्रति श्रद्धा एवं तृतीय वीर वृत्ति की मनोवृत्ति है. गांधी जी के प्रभाव के कारण राष्ट्रीय आंदोलन के मुख्य अंग सत्याग्रह, हिन्दू-मुस्लिम एक्य, अछूतोद्धार एवं स्वदेश व्यवहार है. मातृभूमि पर मर मिटने की भावना कवि देशवासियों में जगाता हुआ सहिष्णु बलिदानी वीरों का वर्णन करता है जिन्होंने मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए बंदी जीवन के कष्ट भोगे, शारीरिक कष्ट सहें, एवं साम्राज्यवाद की दीवार को ढाने के लिए अपने प्राणों तक का

उत्सर्ग कर दिया. प्रथम प्रयाण "[64] एवं " चेतना का सत्याग्रह " शीर्षक बड़ी ही प्रांजल कविता द्वारा अहिंसा साधन के व्यवहारिक प्रयोग का सरल वर्णन किया है.

" जब बिना शस्त्र लड़ने को इन वीरों में जागा गौरव,
तब कौन रोक सकता उनको आत्माहुति हो जिनका वैभव ?
× × ×
आँखों में थी करुणा बहती अधरों पर थी मुसकान भरी,
उर में उमंग स्वर में तरंग की नूतन दिव्य ज्योति निखरी !
× × ×
पड़ गईं हाथ में हथकड़ियाँ वे जीवन की मधुमय घड़ियाँ,
हम जिन्हें पहन कर खंड खंड करते हैं लोहे की कड़ियाँ । "[65].

अतीत के प्रति मोह और वंदना को भी सोहनलाल द्विवेदी की राष्ट्रीय चेतना का प्रारंभिक रूप माना जा सकता है. कवि सांस्कृतिक पुनर्जागरण से प्रेरणा ग्रहण करता प्रतीत होता है और यही सांस्कृतिक पुनर्जागरण वीर काव्यों का प्रेरणा स्त्रोत है-

" बोले, वे द्रोणाचार्य कहाँ ? वह सूक्ष्म लक्ष्य संधान कहाँ ?
है कहाँ वीर अर्जुन मेरे गांडीव कहाँ हैं ? बाण कहाँ ?
गीता गायक हैं कृष्ण कहाँ ? वह वीर धनुर्धर पार्थ कहाँ ?
है कुरुक्षेत्र वैसा ही पर वह शौर्य कहाँ ? पुरुषार्थ कहाँ ? "[66]

प्रताप के माध्यम से भी कवि यही भावना जागृत करता प्रतीत होता है. " प्रभाती ", " चेतना " एवं " भैरवी " में यही प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती है. परन्तु " वासवदत्ता " में वीर रस के उत्कृष्ट उदाहरण भी मिल जाते हैं.

यथा " संसार चूड़ावत " में -

" वीर सरदार चूड़ावत छिन्न शिर हेर
समझ गये सभी, किया पल श भर कहीं न देर
× × ×
जाता जिस ओर प्रलय घटा बन छाता उधर
पाट-पाट भूमि लक्ष लक्ष नरमुंडों से
कोटि मुंडमाल रणचन्डी के चरणों में,
अर्पित समर्पित कर बना वह अजेय । " 67.

इस प्रकार छायावादी युग से चले आ रहे कवियों में स्वदेश प्रेम, राष्ट्रीयता, वीर पुजा, सत्याग्रहियों के बलिदान की भावना दृष्टिगोचर होती हैं . अतः पूर्ववर्ती अध्याय के वीर काव्यों के प्रेरणा स्त्रोतों के विषयक विवेचन के प्रकाश में यह कहा जा सकता है कि इन रचनाओं के पीछे सांस्कृतिक पुनर्जागरण, अतीत के प्रति गौरव की भावना, राष्ट्रीय आंदोलन प्रेरक चेतना के रुप में कार्य करती रही हैं. इस प्रकार उपरिनिर्दिष्ट कवियों ने वीर काव्यों की रचना में महत्वपूर्ण योगदान दिया.

दिनकर, श्यामनारायण पाण्डेय, शिवमंगल सिंह सुमन, गुरुभक्त सिंह भक्त, द्वारिका प्रसाद मिश्र, कुँवरचन्द्र प्रकाश सिंह , मलखान सिंह सिसौदिया आदि कवि प्रगतिवाद के प्रति पूर्णतया प्रतिबद्ध नहीं है. इसके साथ ही इन कवियों ने वीर काव्य परम्परा की भूमियों को भी स्पर्श किया है जैसाकि परवर्ती विवेचन से स्पष्ट है.

ओज और पौरुष के प्रतीक कवि दिनकर ने अतीत के प्रति सम्मान जगाते हुए राष्ट्रीय आंदोलनों द्वारा भारतीय जनता में आत्मगौरव एवं नवीन चेतना जगाकर स्वतंत्रता के प्रति दृढ़ निष्ठ को जगाया. इनकी कविताओं में क्रांति एवं आक्रोश का स्वर प्रधान है. " हुंकार " संग्रह की " स्वर्ग दहन " एवं " आलोकधन्वा " शीर्षक रचनायें क्रांति युग के जाज्वल्यमान पौरुष तथा कवि के प्रबल आक्रोश से युक्त हैं. 68 कवि क्रांति को ही एक

मात्र मुक्ति का साधन मानता हैं. कवि में अत्याचार, अनाचार, शोषण के प्रति क्रोध और आक्रोश की भावना है.

कवि की इस युग में आने वाली वीर रस परक राष्ट्रीय चेतना की रचनायें " हुंकार ", " सामधेनी " नामक संग्रह एवं " कुरुक्षेत्र " नामक खण्ड काव्य है. हुंकार " संग्रह की कविताओं में " दिगम्बरि, " अनलकिरीट " " स्वर्गदहन "," आलोक ", " वन्दना " शीर्षक कवितायें प्रमुख हैं. जिनके एक दो उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं. " अनलकिरीट " शीर्षक कविता में कवि ने स्वातंत्र्य के सुधा बीज बोने की आकांक्षा रखने वालों को कालकूट पीने के लिए सतर्क और सावधान किया है. वह प्रत्येक परिस्थिति में आगे बढने वाले सैनिकों की माँग करता है. अर्थात कवि स्वाधीनता प्रेमी, महत्वाकांक्षी नवयुवकों को महानतम कष्ट सहन करने के लिए प्रस्तुत रहने की प्रेरणा दी गयी है-

" लेना अनल-किरीट भाल पर ओ आशिक होने वाले.
काल कूट पहले पी लेना, सुधा बीज बोने वाले ।

× × ×

जिन्हें देखकर डोल गयी हिम्मत दिलेर मरदानों की.
उन मौजों पर चली जा रही किश्ती कुछ दिवानों की ।

× × ×

अभय बैठ ज्वाला मुखियों पर अपना मंत्र जगाते हैं,
ये हैं वे जिनके जादू पानी में आग लगाते हैं । " 68

" दिगम्बर " शीर्षक कविता में कवि क्रान्ति का कर्णहार नव युवकों को ही मानते हैं और क्रांति में उठनेवाले ज्वार को ही समय की माँग समझते हैं. 70

" सामधेनी " का कवि मानव की संस्कृति का ह्रास देखकर दुःखी है. वह धर्म और शौर्य के बुझे दीपक को प्रज्ज्वलित करने के लिए समर्थ,

पौरुषवान व्यक्तियों का आह्वान करता है. वह मानव को देव स्वरूप बनाने के लिए क्रान्ति के यज्ञ में जलाना चाहता है. कवि क्रान्ति को काली, शिवा और भवानी की प्रतिमूर्ति मानता है. इस संग्रह की महत्वपूर्ण वीर रस की कवितायें " आग की भीख " " जवानियाँ ", एवं " साथी " हैं. यहाँ एक उदाहरण पर्याप्त होगा. " जवानियाँ " शीर्षक कविता में जवानी के वास्तविक स्वरूप का उद्घाटन हुआ है. कवि की दृष्टि में जवानी वह है जिसमें पौरुष की उद्दाम ज्वाला जलती रहे, जो अंध विश्वासों एवं गलत परम्पराओं का भंजन करने में समर्थ हो और जो सदा लहू में स्नान करती हो ।

" कुरुक्षेत्र " खण्डकाव्य में कवि ने महाभारत की पौराणिक कथा को लेकर युद्ध के बाद उठी समस्या पर विचार किया है. भारत विभाजन के समय जिन समस्याओं का हमें सामना करना पड़ा उसका समाधान दिनकर ने इस कृति में किया है. कवि के कलेवर में नवयुग को मुखरित करते हुए दो युगों की भावनाओं को एक ही माला में पिरोने का सफल प्रयास इस कृति में किया है. इसमें वीर दर्पपूर्ण उक्तियों के जीते जागते चित्र उपलब्ध हो जाते हैं --

" जिनकी भुजाओं की शिराएँ फड़की ही नहीं,
जिनके लहू में नहीं वेग है अनल का,
शिव का पदोदक ही पेय जिनका है रहा,
चक्खा ही ~~कभी~~ जिन्होंने नहीं स्वाद हलाहल का,
जिनके हृदय में कभी आग सुलगी ही नहीं,
ठेस लगते ही अहंकार नहीं छलका,
जिसको सहारा नहीं भुजा के प्रताप का है,
बैठते भरोसा किये वे ही आत्म बल का । " 71

इस प्रकार दिनकर में सांस्कृतिक पुनर्जागरण, राष्ट्रीय आंदोलन एवं अतीत के प्रति गौरव की भावना प्रेरक चेतना के रूप में रही है. कवि द्वारा विरचित वीर रस की रचनायें गौरव का विषय हैं.

वीर रस के प्रणेता श्याम नारायण " पाण्डेय " के " हल्दी घाटी " एवं " जौहर " महाकाव्य वीर रस की कोटि में आते हैं. कवि ने इतिहास के गौरव पृष्ठों से प्रताप और रानी पद्मिनी की कहानी को आधार बनाकर मातृभूमि के प्रति सम्मान, श्रद्धा एवं उसके लिए बलिदान होने वाली चेतना को जागृत किया है. प्रताप के माध्यम से ही उन्होंने विदेशी राज्य के प्रति असंतोष प्रकट कर वीर वृत्ति को प्रतिष्ठित करने का सफल प्रयास किया है. " हल्दी घाटी " महाकाव्य चित्तौड़ नरेश राणा प्रताप के इतिहास प्रसिद्ध हल्दीघाटी के रोमांचकारी युद्ध पर आधारित है. इसमें कवि ने राणा प्रताप के आत्म बलिदान पूर्ण शौर्य की गौरव गाथा को वर्णित किया है जिसने स्वतंत्रता दीप की लौ के प्रकाश को अडिग बनाये रखने का सफल प्रयत्न किया. इसके लिए प्रताप ने शारीरिक, मानसिक और पारिवारिक कष्टों को सहन किया. इसमें वीरता के अनेक जीते जागते चित्र अंकित हुए हैं ।

द्वितीय महाकाव्य " जौहर " चित्तौड़ नरेश रत्नसिंह एवं रानी पद्मिनी की ऐतिहासिक घटना पर आधारित है. इसमें राजा रत्नसिंह की वीरता, आत्मबलिदान, पद्मिनी की सुन्दरता एवं सतीत्व की रक्षा के लिए जौहर व्रत, गोरा बादल की वीरता और खिलजी की कुटिलता का वर्णन कवि ने बड़े ही कौशल से किया है. इनकी अन्य रचनायें प्रगतिवाद युग के पश्चात आती है जिन पर यथास्थान आगे विचार किया जायेगा.

शिव मंगल सिंह " सुमन " छायावादी शैली अपनाकर वैयक्तिक प्रणय के उद्दीप्त भावों में अवश्य बहे पर उनका एक स्वस्थ पक्ष भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है जिनमें उनकी समाजोन्मुखी और विद्रोही प्रवृत्ति के दर्शन होते

हैं. कवि ने मुख्यतः संघर्षशील जीवन, उसका अडिग विश्वास, साहस तथा जीवन के प्रति अनुराग व्यक्त करने की चेष्टा की है और इसी बल की भावना के बल पर भारतवासियों में जागरण का मंत्र फूँकता हुआ साम्राज्यवाद को नष्ट करने की प्रेरणा देता है. कवि में बलिदान की बलवती भावना भी दृष्टिगोचर होती है. जो इस युग का मुख्य स्वर हैं. समाजवाद के प्रति भी कवि की गहरी निष्टा है जिस कारण वह " सोवियत रूस के प्रति " " लालसेना ", " स्तालिनग्रेद " और " मास्को अभी दूर नहीं है " आदि रचनाओं की रचना करता है और अपने विचारों को रूसी जनक्रांति और समाजवाद के साथ सम्बद्ध कर देता है. साहस, बलिदान और त्याग आदि की भावनाएँ इनके काव्य में अधिकतर व्यक्त हुई हैं. कवि ने किसी वाद विशेष का सहारा नहीं लिया किंतु हर क्रिया की प्रतिक्रिया बड़े मार्मिक ढंग से की है. उत्साह एवं विश्वास ही उनके वीरत्व के मूल परिपाक हैं. कवि देशवासियों में नवजागरण का शंख फूँकता हुआ अंग्रेजी साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंकने का आ आह्वान करता है. कवि प्राणों में रक्त के उठते हुए ज्वार की बात करता है वह गोली का उत्तर गोली से देने के लिए तत्पर है चाहे प्राणों की बाजी ही क्यों न लगानी पड़े. [72]

" परीक्षा दो " कविता में स्वतंत्रता- संग्राम में कूद पड़ने का आह्वान करते हुए कहते हैं ---

" आओ, उठो, चलो ब जल्दी
समरांगण में कुहराम मचाने
पीकर जिसका दूध रूठे हैं
उस माता की लाजे बचाने । " [73]

" तूफान की ओर ", " नई आग है, नई आग है ", " प्राण पथिक ", " आदि अन्त ", " पथ भूल न जाना पथिक " में कवि ने स्वतंत्रता, सामाजिक संबंधों में कामलता, एकात्मकता संवेदनशीलता लाने

का प्रयास किया है. पूर्ववर्ती अध्याय के वीर काव्यों के प्रेरणा स्त्रोतों से विषयक चेतना के पीछे सांस्कृतिक पुनर्जागरण, धर्म संघर्ष, सोवियत रूस का समाजवाद आदि से प्रभावित दृष्टिगोचर होता है.

गुरुभक्त सिंह " भक्त " भारत की अतीत गरिमा का गान करने वाले प्रसिद्ध कवि हैं. इन्होंने प्राचीन संस्कृति, वीर पूजा एवं गांधी की अहिंसात्मक विचार धारा को अपने काव्य में संजोने का पूर्ण प्रयत्न किया है. स्वदेश प्रेम की भावना का प्रस्फुटन भी इनके काव्यों में पर्याप्त रूप में मिलता है. " विक्रमादित्य " महाकाव्य की मुख्य घटना संस्कृत के " देवी-चन्द्र गुप्त " नाटक पर आधारित है जिसमें विक्रमादित्य, रामगुप्त और ध्रुवदेवी की कहानी को कवि ने अपने कला-कौशल से संवारा है. चन्द्रगुप्त एक वीर सेनानी, शक्तिवान, शीलवान, सहनशील, साहसी एवं चारित्रिक गुणों से सम्पन्न है. इसमें चन्द्रगुप्त के युद्धवीर और राष्ट्रप्रेमी दोनों का सफल उद्घाटन हुआ है. राष्ट्र के प्रति बलवती भावना इस काव्य में दृष्टि-गोचर होती है. वीर रस के साथ श्रृंगार रस की भी अजस्त्रधारा प्रवाहित होती दृष्टिगोचर होती है .

द्वारिका प्रसाद मिश्र ने सांस्कृतिक पुनर्जागरण और अतीत के प्रति अपनी गौरव भावना को जाग्रत करते हुए " कृष्णायन " महाकाव्य की रचना की. कवि ने इसमें कृष्ण काव्य संबंधी परम्परागत काव्य विषय और तुलसीदास के रामचरित मानस की पुरातन रचना पद्धति को अपनाया है. इसमें कृष्ण जीवन से संबंधित सभी घटनाओं को बड़े ही कौशल से उद्-घाटित किया गया है. कवि ने कृष्ण के चरित्र में देवत्व और मानुत्व दोनों का समावेश किया है. इनके कृष्ण गोपी वल्लभ, असुर संहारक, धर्म संस्थापक, राजनीतिज्ञ एवं दार्शनिक हैं. वीर रस सिक्त इस काव्य में कवि ने वीर रस के व्यापक चित्र खींचे हैं.

पंडित मोहनलाल महतो " वियोगी " द्वारा रचित आर्यावर्त महाकाव्य अमिताक्षर छन्द का मौलिक महाकाव्य है. यह जीवन की गरिमा का एक नया परिचय देता है. जब कर्तव्य के मोह से घनघटाच्छन्न आकाश सा हमारा अन्तःकरण आच्छान्न हो जाता है तब हमारे कर्ममय रूप में अचलता आ बैठती है. हम स्थिर होकर हृदयमंथन की स्थिति में प्राप्त हो जाते हैं. यही भावना इसमें महाराज पृथ्वीराज के माध्यम से दर्शायी है. इसमें कवि ने इतिहास प्रसिद्ध गोरी और पृथ्वीराज के युद्ध की घटना को बड़े ही मार्मिक और ओजस्वी रूप में दर्शाया है. वीर रस सिक्त इस महाकाव्य में कवि ने वीरता, दर्प एवं ओज के मनोहरी चित्र खींचे हैं.

कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह की सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर रचित कविताओं में वीर रस युक्त राष्ट्रीय काव्य की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं. अतीत की गौरव गाथा का स्मरण कराके क्षात्र धर्म के माध्यम से सोयी हुई चेतना को जाग्रत करना चाहा है. " पाटलीपुत्र ", " डौंडिया खेरा ", " हल्दी घाटी ", " अयोध्या " आदि में इसी चेतना द्वारा भारतीयों में उत्साह फूँका है. इसके अतिरिक्त कवि देश की महान विभूतियों को भी नहीं भूलता एवं छत्रसाल की याद दिलाता हुआ यश प्राप्ति की कामना करता है. " वेणी माधव ", एवं " बंदा वैरागी " जैसे वीरों के माध्यम से कवि परतंत्रता पर दुःख प्रकट करता है और प्रत्येक भारतीयों को कर्म का संदेश देते हुए कर्मशील होने की प्रेरणा प्रदान करता है. " वीर बाहु " में बाहुबल की शक्ति के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहता है . " विजया ", " चिन्ता की ज्वाला ", " वज्र घोर हुंकृति ", " वाण की शिखा " एवं " पौरुष " में स्वतंत्रता के मतवालों को उत्साह प्रदान कर स्वतंत्रता के लिए लालायित करता है. वास्तव में कवि की चेतना राष्ट्रीय रही है. कवि ने अतीत के वातायन से वर्तमान की समस्याओं को देखने का सफल प्रयास किया है. [74]

" बंगाल के प्रति " और अन्य कविताओं के प्रकाशन से ही श्री मलखान सिंह " सिसौदिया " प्रगतिशील हिन्दी कवियों की अग्रिम पंक्ति में प्रतिष्ठित हो गये. देश प्रेम की भावना ही कवि की चेतना का केन्द्र बिन्दु है. साहस और उत्साह की भावना भी पर्याप्त मात्रा में कवि में मिलती है. " देश देश ने करवट बदली " एवं " मेरी अभिलाषा " आदि कवितायें वीर रस से परिपूर्ण हैं.

अतः पूर्ववर्ती अध्याय में वर्णित वीर काव्यों के प्रेरणा स्त्रोत सांस्कृतिक पुनर्जागरण, राष्ट्रीय आंदोलन एवं आर्थिक परिस्थिति से उत्पन्न वर्ग संघर्ष से प्रेरणा ग्रहण कर राष्ट्रीय वीर रस युक्त काव्यों का सृजन हुआ है. पूर्ववर्ती पृष्ठों में प्रगतिवाद युग के वीर काव्यों तथा उनकी भूमि को न्यूनाधिक रूप में स्पर्श करने वाली लगभग पाँच महाकाव्य एक खण्डकाव्य के अतिरिक्त मुक्तक संग्रह में प्रकाशित कितनी ही कवितायें प्रकाश में आयी हैं. समग्रतया विचार करने पर हम निम्न लिखित निष्कर्षों पर पहुँचते हैं.

पूर्ववर्ती विवेचन के आलोक में हम कह सकते हैं कि प्रगतिवादी काव्य में स्वतः यथार्थ के प्रति सचेष्ट आग्रह, आर्थिक परिस्थिति से उत्पन्न वर्ग संघर्ष की भावना मुखरित हुई . द्वितीय प्रगतिवादी काव्य में चित्रित वीर भावना का प्रबल रूप उन रचनाओं में दृष्टिगोचर होता है जहाँ आत्म बलिदान की भावना के प्रति उत्साह दिखाया गया है. तृतीय सांस्कृतिक पुनर्जागरण की भावना को महत्व प्रदान करते हुए प्रताप, कृष्ण , पृथ्वीराज, अर्जुन, पद्मिनी आदि महापुरुषों की प्रशस्ति गायी गयी है. इसके अतिरिक्त देशभक्ति से ओतप्रोत राष्ट्रीय काव्य की रचना भी हुई है जो गौरव का विषय है.

**प्रयोगवाद युग – ( 1946– 1965 )**

सामान्यतः प्रत्येक युग की कविता प्रयोगवादी होती है क्योंकि वह वस्तु और शैली दोनों में अपनी पूर्ववर्ती कविता से भिन्न प्रयोग करके

ही अपने आविर्भाव की घोषणा करती है परन्तु इन दिनों यह विशेषण आधुनिक कविता की एक प्रवृत्ति विशेष के लिए प्रायः रूढ़ सा हो गया है. शताब्दी के तीसरे दशक के अन्त में हिन्दी कवियों में छायावाद के भाव तत्व और रूप आकार दोनों के प्रति एक प्रकार का असन्तोष सा उत्पन्न हो गया और धीरे-धीरे यह धारणा दृढ़ होती गई थी छायावाद की वायवी भाव वस्तु और सीमित काव्य सामग्री आधुनिक जीवन की अभिव्यक्ति करने में सफल नहीं हो सकती. प्रारंभ में इस प्रतिक्रिया का रूप एक समवेत रूप में दिखाई देता था परन्तु कुछ ही वर्षों बाद इन कवियों के दो वर्ग बन गये.

(क) यह वर्ग सचेत होकर निश्चित सामाजिक-राजनीतिक प्रयोजन में साम्यवाद के जीवन दर्शन को अपना कर्तव्य मानकर रचना करने लगा तथा दूसरा वर्ग किसी भी राजनीतिक वाद के बंधन में नहीं पड़ा अपितु उसने काव्य को नवीन प्रयोगों द्वारा सवारने का भार उठाया.

प्रयोगवादी कविता का मूल तत्व स्वभावतः ही काव्य विषयक प्रयोग अथवा अन्वेषण हैं. अज्ञेय ने तारसप्तक की भूमिका में कहा है -

" दावा केवल यही है कि ये सातों अन्वेषी हैं. काव्य के प्रति एक अन्वेषी का दृष्टिकोण उन्हें समानता के सूत्र में बाँधता है. ... बल्कि उनके तो एकत्र होने का कारण ही यह है कि वे किसी एक स्कूल के नहीं हैं, किसी मंजिल पर पहुँचे नहीं हैं, और राही हैं, राहों के अन्वेषी । " 75

इस वर्ग के कवियों का यह विश्वास है कि जीवन की ही तरह काव्य भी एक चिर गतिशील सत्य है जिसकी वास्तविक साधना शोध, अन्वेषण एवं प्रयोग है. काव्य का परम तत्व प्रत्येक युग के लिए सदैव प्राप्य ही रहता है. अपने पूर्ववर्ती युग के प्राप्त पर कोई युग जीवित नहीं रह सकता.

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान देश को घोर आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन की विपन्नता का सामना करना पड़ा. देशवासियों की हर एक साँस एक गहरी निराशा के गहन अंधकार में घुटने लगी. प्रतिदिन जरूरत की वस्तुएँ मंहगी होती जा रही थीं. नैतिक दृष्टि से यह पतन का युग था. " प्रयोग " के तात्पर्य के संबंध में प्रयोगवादी एक मत नहीं हो सके हैं. प्रयोगवाद के प्रतिष्ठापक अज्ञेय प्रयोग को आत्मसत्य के अन्वेषण का माध्यम मानते हैं.[76] शिवदान सिंह " चौहान " प्रयोग के अर्थ विशेष को स्पष्ट करते कहते हैं -

" साहित्य के प्रयोग के अर्थ को एक खास दृष्टिकोण, एक खास किस्म के अंदाज तक ही संकुचित कर देने से प्रयोग को लुंज और लंगड़ा बना देता है, जबकि आधुनिक युग के सम्पूर्ण अन्तर्बाह्य के सत्य को सबल अभिव्यक्ति देने की समस्या इतनी बड़ी है कि आधुनिक कवि और कलाकार को अपने प्रयोगों से सम्पूर्ण जीवन के विस्तार को नापने की छूट ही नहीं, उसमें सामर्थ्य भी होनी चाहिए. "[77]

मानव स्वभाव ही ऐसा है, जब वह किसी प्राचीन वस्तु से ऊब जाता है तो वह हमेशा नवीनता की ओर भागता है और कोई न कोई नयी मंजिल ढूंढ ही लेता है. उसी प्रकार साहित्य के क्षेत्र में भी कवि प्राचीनता से ऊबकर नवीनता की ओर अग्रसर हुआ, नवीन वस्तु एवं नवीन शैली की ओर बढ़ा जिसके परिणामस्वरूप प्रयोगवादी काव्यधारा का जन्म हुआ. अतः इसमें नवीन उपमानों, नवीन मूल्यों और नवीन प्रतीकों का समावेश हुआ.

यद्यपि प्रयोगवाद का आरम्भ " तार सप्तक " के प्रथम संस्करण के प्रकाशन से माना जाता है. किन्तु प्रयोगवादी कवितायें इनसे पहले भी लिखी जाती रही. डा० नामवर सिंह के मतानुसार-

" दूसरे विश्वयुद्ध के काल में ही साम्यवादी प्रचारकों की अवसरवादी दृष्टि जनजीवन के निकट आ गयी थी. स्टालिन के समर्थक गरीब देश, मित्र

राष्ट्रों का समर्थन करने के लिए प्रेरित कर रहे थे, उनकी सहज सहृदयता देश की सामान्य प्रजा के नवीन विकास की चिन्ता के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवाद के प्रचार और विकास के लिए चिन्तित थी. सन् 1940 ई0 में प्रयोगवादी रचनायें सामने आने लगी और वाचक वर्ग भी इनमें रस लेने लगा.... प्रसाद की " प्रलय की छाया " के समय से अथवा मुक्तक छन्दों के रचनाकाल से, तिथि क्रम की दृष्टि से 1940 ई0 के आपास प्रयोगवाद का आरंभ हुआ. "[78]

कुछ समीक्षक प्रयोगवाद को पश्चिमी साहित्य की देन मानते हैं. " इलियड " के प्रभाव की बातें करते हुए उसी का अनुकरण मानते हैं किन्तु वे यह जानने की चेष्टा नहीं करते कि इलियड स्वयं फ्रांस के प्रतीकवादी दर्शन में गले तक डूबा हुआ है. आज का भारतीय जिस भौतिकता और वैज्ञानिक परिवेश को समोये हुए जीवित है वह हमारे ही राष्ट्र की देन हैं कहीं से उधार मांगा हुआ नहीं है. डॉ0 नामवर सिंह प्रयोगवाद को अपने ही देश की धारा मानते हैं उनके अनुसार-

" प्रयोगवाद जैसा कि कुछ पंडितों का अनुमान है, कहीं बाहर से नहीं आया. बाहर से तभी कोई प्रभाव आता है जब इसे ग्रहण करने योग्य अपने यहाँ कि मानसिक पृष्टभूमि हों. इसलिए प्रयोगवाद अपने ही यहाँ की सामाजिक और साहित्यिक परिस्थिति से उत्पन्न हुआ. "[79]

प्रयोगवाद की इस नयी चेतना के साथ-साथ इस युग में राष्ट्रीय आंदोलन तथा क्रान्तिकारी प्रयास भी स्वतंत्रता तक होते रहे हैं. अतः वीर काव्यों की परम्परा प्रयोगवाद से संबंधित नहीं है. युद्ध वीरता के अतिरिक्त गांधी जी की कर्मवीरता भी प्रतिष्ठित हो चुकी थी जिसमें धैर्य और साहस के द्वारा वीरवृत्ति का पोषण होता है. सन् 1947 का स्वतंत्रता अभियान, 1962 का चीन एवं 1965 का पाकिस्तानी आक्रमण इसी युग में आते हैं. अतः हम इस युग की काव्य चेतना को मार्क्सवादी तथा दूसरी

और सांस्कृतिक एवं विदेशी आक्रमणों से जुड़ा हुआ पाते हैं. इस युग में किसी दृढ़ पृष्ठाधार पर राष्ट्रीय या देशभक्ति परक काव्य का सृजन नहीं हुआ, स्फुट रूप से वीर काव्य एवं राष्ट्रीय कविताओं का सृजन हुआ. इस काल में रचित प्रमुख कृतियों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है.

द्विवेदी युग, छायावादी एवं प्रगतिवादी युग में राष्ट्रीय रचनाओं पर कलम चलाने वाले मैथिलीशरण गुप्त की लेखनी इस युग में भी संचरणशील रही है. महाभारत के वृहत कथानक से प्रेरणा ग्रहण कर कविने " जयभारत " प्रबन्ध काव्य का सृजन किया. यह भारतीय जीवन के उत्थान और पतन का पुनराख्यान हैं, जिसके द्वारा भारतीय संस्कृति के विकासोन्मुख स्वरूप और उसकी अप्रतिहत चेतना का अभिलेखन किया गया है. इसमें नारीत्व का वैशिष्ट्य भी अंकित है. यह वीर रसात्मक कृति सांस्कृतिक पुनर्जागरण की देन कही जा सकती है.

प्रयोगवादी युग में भी माखनलाल चतुर्वेदी ने राष्ट्रीय आंदोलनों, देश प्रेम एवं गांधीजी से प्रभावित होकर राष्ट्रीय वीर काव्यों का सृजन किया है. इस काल में लिखित कवि के काव्यों की मूल प्रवृत्ति सांस्कृतिक चेतना के जागरण की है. राजनीतिक परतंत्रता से मुक्त होने के लिए राष्ट्र एक ओर संघर्ष कर रहा था तो दूसरी ओर पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव हमारे देश के सांस्कृतिक विश्वास को क्षीण कर रहा था. इसलिए चतुर्वेदी जी ने इस सांस्कृतिक संघर्ष में राष्ट्र को अपनी रचनाओं द्वारा नयी शक्ति दी. " माता " संग्रह की मूल चेतना यद्यपि गांधीवादी है परन्तु इसमें राष्ट्रीयता और वीर रस के छिट फुट छींटें भी यत्र तत्र दिखाई देते हैं. " समर्पण " में भी राष्ट्रीयता की बातें कम पर सक्रिय राष्ट्रीयता एवं जागरण की चेतना अधिक है. स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए कवि ने सुप्त राष्ट्र को जगाने का कार्य भारत के नवयुवकों को सौंपा है . यथा ....

" ओ बे मूछों के बलिपन्थी ! आ इस घर में आग लगा दे,
ठोकर देकर कह, युग ! चलता चल, युग के सर चढ़ तू चलता चल. " 80

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त देश में जो स्वार्थ परायणता, सिद्धान्त हीनता की बाढ़ आई उसकी प्रतिक्रिया भी इनके काव्य में परिलक्षित होती है.

" हिम तरंगिनी " माखनलाल चतुर्वेदी जी की विभिन्न प्रवृत्तियों को उद्घाटित करने वाली रचनाओं का संग्रह है जो 1949 में प्रकाशित हुआ. इसमें द्विवेदी युगीन प्रवृत्तियों को उद्घाटित करने वाली रचनायें भी है तो छायावादी चेतना से अनुप्राणित रचनायें भी. राष्ट्रीय काव्यधारा से सीधा संबंध होने के कारण इस संग्रह में प्रमुखतः राष्ट्रीयता का ही स्वर गूंजा है. ये रचनायें वीर काव्य की कोटि में भले ही नहीं आतीं किंतु अप्रत्यक्ष रूप से वे वीरवृत्ति की पोषक अवश्य कही जा सकती हैं.

" क्वासि " बाल कृष्ण शर्मा " नवीन " की राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह है. इसमें क्रान्ति एवं विप्लव का स्वर बड़ी तीव्रता के साथ मुखरित हुआ है. मातृभूमि के लिए सर्वस्व न्यौछावर करना ही देश भक्तों का कार्य है. स्वतंत्रता की देवी रक्त की प्यासी है, रक्त दान के बिना स्वतंत्रता रूपी फल प्राप्त नहीं हो सकता. इसमें संकलित " कारागृह " के गीतों में बंदी जीवन की करुण गाथा, " भावी की चिन्ताएँ " में मानव की भावी चिन्ताएँ तो " कमला नेहरू " का अभिनन्दन कर अपनी वीर पूजा की प्रवृत्ति का संकेत देते हैं. इसमें राष्ट्रीयता से युक्त रचनायें ही मुख्य रूप से स्थान पा सकती हैं किन्तु वीर रस की कोई रचना इसमें नहीं मिलती.

" प्राणार्पण " अमर शहीद स्वर्गीय गणेश शंकर विद्यार्थी के ज्वलन्त आत्मोत्सर्ग पर आधारित है. 25 मार्च 1931 ई० को कानपुर में हुए एक साम्प्रदायिक दंगे में विद्यार्थी जी ने अपना बलिदान दिया था. कवि ने इस काव्य में तत्कालीन राजनैतिक तथा सामाजिक स्थिति, राष्ट्रीय भावना,

महात्मा गांधी के सत्याग्रह आन्दोलन, स्वाधीनता प्रतिज्ञापात्र, गांधी इरविन समझौता, भगतसिंह का प्राणदण्ड, गृह युद्ध, जन जागृति एवं साम्प्रदायिक दंगों आदि का सजीव चित्रण कर वीर रस युक्त राष्ट्रीय काव्य का सृजन किया है.

छायावादी युग से निरन्तर कलम चलाने वाले राष्ट्र कवि दिनकर का प्रसिद्ध खंड काव्य " रश्मिरथी " है. इसकी प्रेरणा कवि ने महाभारत सेली है. महाभारत के प्रसिद्ध महारथी कर्ण को इसमें नायक का स्थान दिया गया है. इसमें कवि ने कर्ण की वीरता, त्याग, दानशीलता, आदर्श मैत्री, गुरुभक्ति आदि उदात्त गुणों की सुंदर व्यंजना की है. इस खण्ड काव्य में वीर दर्पपूर्ण उक्तियों में वीर रस की अजस्त्र धारा प्रवाहित हुई है. " इतिहास के आँसू " संकलन में कवि ने मगध महिमा के स्थलों को इस मोड़ की अभिव्यक्ति माना जा सकता है जहाँ पाकिस्तान के वैमनस्य नीति और काश्मीर समस्या का चित्रण भारत यूनान, चन्द्रगुप्त एवं सेल्यूकस के माध्यम से हुआ है. अतीत के माध्यम से व्यापक मानवतावाद की स्थापना ही इस कृति का मूल उद्देश्य है. वीरता की अजस्त्र धारा इसमें प्रवाहित हुई है. सन् 1963 में प्रकाशित " परशुराम की प्रतीक्षा " दिनकर का प्रतिनिधि काव्य संग्रह है. इसकी मूल चेतना भारत पर चीनी आक्रमण से संबंधित है, वास्तव में यह चीनी आक्रमण की पृष्ठभूमि पर लिखी गयी दिनकर की सशक्त रचना है. परशुराम के प्रतीक द्वारा कवि ने भारतीयों को जगाया है. इसमें " जनता जगी हुई है ", " आज कसौटी पर गांधी की आग है " " अहिंसावादी का युद्ध गीत " और आपद्धर्म वीर रस की प्रमुख कवितायें हैं जिसमें वीरत्व के साथ-साथ दिनकर का विचारक और दार्शनिक भी प्रबुद्ध हुआ है. इस प्रकार हम देखते हैं कि राष्ट्र कवि दिनकर ने अपनी वीरता परक कृतियों में समकालीन युग संदर्भों से बड़ी सफलतापूर्वक जोड़ा है.

श्याम नारायण पाण्डेय कृत " जयहनुमान " , " गोराबध " और " तुमुल " खण्डकाव्य वीर काव्यों की महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं. इनमें से " गोरा बध " ऐतिहासिक और शेष दोनों पौराणिक कथानकों पर आधारित हैं. उनकी सुप्रसिद्ध काव्य " शिवाजी महाकाव्य " सन् 1970 ई० की रचना है जो हमारे अध्ययन के अंतर्गत नहीं आती.

" जयहनुमान " में कवि ने हनुमान के वीरत्व, स्वाभिमान, साहस, निडरता एवं पराक्रम का ही वर्णन करना अपना मूल उद्देश्य रखा है. वीर दर्पपूर्ण उक्तियाँ जगह-2 दृष्टिगोचर होती हैं. " तुमुल " खण्ड काव्य दो ओजस्वी वीरों लक्ष्मण एवं मेघनाद के युद्ध को लेकर रचा गया है. इसमें दोनों का घमासन युद्ध, लक्ष्मण की मूर्च्छा एवं करते हुए मेघनाद का लक्ष्मण द्वारा बध दर्शाया गया है. संपूर्ण कृति वीर रस से ओतप्रोत है. " गोरा बध " खण्डकाव्य की कथा कवि ने इतिहास से ग्रहण कर अपनी कल्पना से इसे संवारा है. इसमें गोरा बादल की युद्ध वीरता, उनका ओज एवं दर्प ही दर्शाया गया है. यह कृति वीर रस की महत्वपूर्ण कृति है.

मलखान सिंह " सिसौदिया " का प्रसिद्ध खण्डकाव्य " शूली और शान्ति " 1965 के भारत पाक युद्ध से प्रेरणा ग्रहण कर लिखा गया है. कवि ने युद्ध की समस्त घटनाओं, वीरों के अद्भुत शौर्य, जनमानस का युद्ध के प्रति उत्साह आदि दर्शाया गया है. इसके अतिरिक्त काश्मीर की प्राकृतिक सुषमा का वर्णन, युद्ध के दौरान हुई राष्ट्रीय एकता का वर्णन भी कवि ने बड़ी सजीवता से किया है. इसमें वीर रस की अजस्त्र धारा प्रवाहित हुई है. वास्तव में वीर रस की रचनाओं में कवि का यह महत्वपूर्ण प्रयास है.

इस प्रकार छायावादी एवं प्रगतिवादी युग से चले आ रहे इन कवियों के पूर्ववर्ती विवेचन से स्पष्ट है कि सांस्कृतिक पुनर्जागरण एवं विदेशी आक्रमणों से प्रेरणा ग्रहण कर ही ये वीर काव्य लिखे गये हैं. इनमें देश की संस्कृति के प्रति अटूट निष्टा एवं प्यार, देश प्रेम, अतीत का गौरव गान

Hansa Mehta Library
Th 4046-15

एवं युद्धों का प्रत्यक्ष वर्णन है. इन कृतियों के अतिरिक्त भी वे कृतियाँ मिलती हैं जो प्रयोगवाद में लिखी गयी और जिनके रचयिताओं ने पूर्ववर्ती दोनों कालों में रचना नहीं की . इसलिए उन कृतियों का संक्षिप्त उल्लेख भी यहाँ उपादेय है.

आनन्दकुमार विरचित " अंगराज " महाकाव्य पौराणिक ग्रंथ महाभारत से आधार ग्रहण कर लिखा है. सांस्कृतिक पुनर्जागरण की चेतना से प्रभावित होकर कवि ने महारथी कर्ण की जीवन गाथा का वर्णन कर उसके युद्धवीरता, दानवीरता, धर्मवीरता और कर्मवीरता आदि सभी कोणों को दर्शाया है. वीर रस प्रधान इस महाकाव्य में वीरत्व का अखण्ड प्रवाह लहराता प्रतीत होता है यह वीर रस की एक उत्कृष्ट कृति कही जा सकती है. 81

श्री कृष्ण सरल का " सरदार भगत सिंह " महाकाव्य प्रयोगवादी युग में वीर काव्यों की कड़ी का महत्वपूर्ण चरण है. इस काव्य को रचने में कवि ने भारतीय वीरों और राजनीतिक परिस्थितियों से प्रेरणा ग्रहण की है. शहीद भगत सिंह के शौर्य, दर्प का वर्णन करते हुए क्रांतिकारियों के स्वतंत्रता संग्राम में किये गये प्रयासों का बड़ा ही सजीव वर्णन उपस्थित किया है. शहीद भगतसिंह के माध्यम से देश प्रेम, ओजस्विता, भावोत्तेजना, उत्साह एवं राष्ट्र प्रेम आदि को चित्रित किया है. वास्तव में यह कृति राष्ट्रीय वीर काव्य की कोटि में रखी जा सकती हैं. श्री कृष्ण सरल के दो उल्लेखनीय कृतियाँ " आजाद " एवं " शिवाजी " वीर रस पूर्ण महाकाव्य हैं जो क्रमश: 1966 एवं 1977 ई० की रचनाएँ हैं जो हमारे अध्ययन में नहीं आती.

श्याम नारायण प्रसाद कृत " झाँसी की रानी " वीर काव्यों में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं. यह एक महाकाव्य है जिसमें लक्ष्मीबाई के अनन्त शौर्य, पराक्रम का वर्णन है. इस काव्य को लिखने की प्रेरणा कवि ने इतिहास से ली है. बाल्यकाल से लेकर मृत्यु तक रानी वीरता के जीवन्त आदर्शों को अपने व्यक्तित्व और चिन्तन में आत्मसात कर चुकी थी. यह

काव्य देश प्रेम का ज्वलन्त उदाहरण है. सन् 1857 के स्वतंत्रता युद्ध में उत्साह जगाने वाली रानी के चरित्र में कवि ने जातीय स्वाभिमान, राष्ट्रीय गौरव, मातृभूमि के हितरक्षण में अपना सर्वस्व उत्सर्ग करने के उच्च आदर्शों को स्थापित किया है. वह एक वीर, साहसी, दूरदर्शी सेनापति के रूप में भी दृष्टिगोचर होती है. समस्त काव्य में वीर रस की व्यंजना व्याप्त है. यथा....

" गोरी पलटन शोणित से तर कहती यह कैसी रानी है '
हो गया आज से दुर्लभ अब वह टेम्स नदी का पानी है ।।
अब लौट न पायेंगे घर को यह रानी बनी भवानी है ।
थे नहीं जानते भारत की नारी में अभी रवानी है ।
अब भी यमुना की धारा से सुन पड़ती वीर कहानी है ।।
तो कभी नहीं हम पद रखते यह वीर देश अभिमानी है ।
नारी में जब यह शक्ति भरी, तो नर की कौन कहानी है ।।[82]

जीवन शुक्ल के " सिंह द्वार " खण्डकाव्य ग्यारहवीं शती में बापा रावल और महमूद गजनवी के युद्ध को कथावस्तु के रूप में ग्रहण किया है. सौराष्ट्र के बापा रावल घोघागढ़ निवासी स्वतंत्र सरदार के शौर्य, दर्प अपने धर्म और संस्कृति पर मर मिटने का वर्णन किया है. वीर रस संपूर्ण काव्य में प्रवाहित हुआ है. [83]

विश्वनाथ पाठक द्वारा रचित " रणचण्डी " नामक खण्ड काव्य " दुर्गा सप्तशती " के उत्तम चरित का आधार ग्रहण कर लिखा गया है. इसमें दुर्गा की वीरता एवं शुम्भ निशुम्भ के युद्ध का वर्णन है. कथानक पौराणिक है जिसमें कोई राष्ट्रीय चेतना या समसामायिक संदर्भ दृष्टिगोचर नहीं होता. अधिक से अधिक इसे अतीत के प्रति गौरव भावना की प्रेरणा से सम्बद्ध किया जा सकता है ।

हरदयालु सिंह विरचित " रावण " महाकाव्य पौराणिक है.इसमें रामायण की कथा को लेकर रावण की मृत्यु के उपरान्त उसके पुत्र अरिमर्दन द्वारा स्वतंत्रता की चेतना को जगाये रखने का प्रयास दृष्टिगोचर होता है. दासता की मनोवृत्ति के प्रति घृणा एवं प्रजातंत्रीय शासन पद्धति का संस्थापन " रावण " महाकाव्य में दर्शाया गया है. यह महाकाव्य आधुनिक काल में नवयुग की चेतना के फलस्वरूप प्रकाश में आया है. वीर रस की अजस्त्र धारा इसमें बहती नजर आती है.

लक्ष्मी नारायण मिश्र कृत " सेनापति कर्ण " में भी महाभारत के महारथी कर्ण की कथा को दर्शाया गया है. कथानक पौराणिक है जो अतीत के प्रति गौरव भावना की प्रेरणा से सम्बद्ध किया जा सकता है. केदारनाथ मिश्र " प्रभात " का " कर्ण " खण्डकाव्य भी पूर्ववर्ती " अंगराज ", " रश्मिरथि ", " सेनापति कर्ण ", की तरह कर्ण की वीरता, साहस, ओज, मैत्री एवं दानवीरता को ही मुख्य रखकर लिखा गया है. सांस्कृतिक पुनर्जागरण की चेतना से इसे सम्बद्ध किया जा सकता है.

जगन्नाथ प्रसाद " मिलिंद " का " स्वतंत्रता की बलिवेदी " नामक खण्ड काव्य एवं " बलिपथ के गीत " नामक संग्रह को समसामयिक राष्ट्रीय चेतना का ही प्रतिफलन माना जा सकता है. इसमें कवि ने स्वतंत्रता संग्राम में क्रांतिकारियों और सत्याग्रहियों द्वारा किये गये संघर्षों को दर्शाया है. यह वीर रस की उत्कृष्ट काव्य कृतियाँ हैं.

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि जीवन की भांति काव्य में भी नवीनता और प्रयोग का बड़ा महत्व है, परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि मूल्यों का संतुलन बना रहे. पूर्ववर्ती पृष्ठों में प्रयोगवाद के वीर काव्यों तथा उसकी भूमि में न्यूनाधिक रूप से स्पर्श करने वाली राष्ट्रीय सांस्कृतिक रचनाओं का जो विवेचन प्रस्तुत किया गया है, उनके आधार पर जयभारत, अंगराज, भगतसिंह, रावण एवं " झांसी की रानी " महाकाव्य के अतिरिक्त

" रश्मिरथी ", " प्राणांप्रण " " जय हनुमान " " मेरावध " , " तुमुल ", " शूली और शान्ति ", " सिंह द्वार ", " रणचण्डी ", " कर्ण ", " सेनापति कर्ण " " स्वतंत्रता की बलिवेदी " नामक खण्ड काव्य आते हैं. इसके अतिरिक्त लगभग " हिमतरंगिनी ", " मतत ", " युगचरण ", " समर्पण ", " मरण ज्वार ", " क्वासि ", " परशुराम की प्रतीक्षा ", " बलिपथ के गीत " छोटी-बड़ी कृतियाँ प्रकाश में आती हैं. वीर काव्यों के विषय में यथास्थान विवेचन प्रस्तुत किया गया है जिससे स्पष्ट है कि इनकी रचना की पृष्ठभूमि में अतीत के प्रति गौरव भावना जो कि राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का परिणाम है कही जा सकती है. इसके अतिरिक्त विदेशी आक्रमणों ने भी इनकी रचना में पूर्ण सहयोग दिया है.

पूर्ववर्ती विवेचन के आलोक में हम कह सकते हैं कि प्रयोगवादी काव्य में स्वतः यथार्थ के प्रति यथेष्ट आग्रह, राष्ट्रीयता की दृढ़ता एवं विश्वास दिखाई देता है.

निष्कर्ष : समग्रतया मूल्यांकन

प्रस्तुत अध्याय में सन् 1920 से लेकर 1965 ई0 के बीच रचित वीर काव्यों तथा उनकी भूमि से संबंधित काव्य कृतियों का जो अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है, उसके आधार पर यह सहज ही दृष्टिगत किया जा सकता है कि वीर काव्यों की कोटि में आने वाली प्रबन्ध एवं मुक्तक रचनाओं की पर्याप्त संख्या है. पूर्ववर्ती पृष्ठों में क्रमशः छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और स्वातंत्र्योत्तर युगों की काव्य चेतना के परिप्रेक्ष्य में वीर काव्यों की अवस्थिति पर जो विवरण प्रस्तुत किया गया है उससे यह महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आता है कि इतर काव्यों की चेतना इन कला अथवा प्रयोजन आन्दोलनों से अवश्य मोड़ लेती रही है किन्तु वीर काव्यों की अखण्ड परम्परा में कहीं भी व्यवधान नहीं दिखायी पड़ता.

द्वितीय उल्लेखनीय तथ्य यह है कि वीर काव्यों की परंपरा की अक्षुण्णता के आधारभूत कारणों पर यदि विचार किया जाय तो हम कह सकते हैं कि सन् 1920 ई० से लेकर 15 अगस्त 1947 तक का कालखण्ड युगीन परिवेश के दृष्टिकोण से राष्ट्रीय आंदोलनों और स्वतंत्रता -प्राप्ति के लिए गये क्रान्तिकारियों के अभियानों का काल है. इस काल खण्ड में हिन्दी कविता के क्षेत्र में भले ही काव्यान्दोलन चलाये गये हो किंतु कवि युगगत चेतना से अप्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता. उक्त राष्ट्रीय के साथ- 2 सामाजिक और सांस्कृतिक पुनरुत्थान की चेतना भी सतत गतिशील रही है. इतना ही नहीं यह चेतना साम्यवादी जीवन दृष्टि को भी अपनी चेतना में रंजित करके भी प्रस्तुत हुई है. दिनकर कृत " रश्मिरथी ", " रावण ", " अंगराज ", " सेनापति कर्ण " एवं " कर्ण " इसका ज्वलन्त उदाहरण है. उपर्युक्त युग चेतना ने कवियों के लिए उज्ज्वल अतीत के प्रति गौरव एवं आकर्षण की भावना से प्रेरित होने का पथ प्रशस्त किया. इस कालखण्ड के वीर काव्य इस महत्वपूर्ण तथ्य के परिचायक कहे जा सकते हैं. स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हुए दो दो विदेशी आक्रमणों की गंभीर परिस्थितियों ने भी उपर्युक्त राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना को नये संदर्भ के साथ उद्दीप्त किया है और इसके परिणाम स्वरूप अनेक मुक्तक रचनायें प्रकाश में आयी, यद्यपि अन्तर यह है कि सम-सामयिक संदर्भों पर अधिक कविताएँ लिखी गयी.

इस काव्यधारा का तीसरा महत्वपूर्ण पक्ष, उपर्युक्त काव्य आंदोलनों की कला विषयक सजगता को अपनाने की है. किन्तु लक्ष्य करने की बात यह है कि वीर काव्यों में छायावादी, प्रगतिवादी या प्रयोगवादी कला चेतना को आवश्यकता अनुसार अंशतः ही अपनाया गया है. काव्य रूपों और वर्णन शैली में प्रायः परम्परागत चेतनाधारा ही अधिक प्रभावशाली रूप से विद्यमान रही है. संक्षेप में देखा जाय तो छायावाद ने भावांकन में सूक्ष्मता, प्रगतिवाद ने भाषा की स्पष्टता तथा जनसाधारण की ओर उन्मुखता तथा प्रयोगवाद ने छंद और शैली के प्रयोग इन काव्य धाराओं को दिये किन्तु वस्तुगत और उद्देश्यगत चेतना एक ही दिखाई पड़ती है.

भारतीय जनमानस पर पौराणिक कथाओं का प्रभाव तथा उसके प्रति आकर्षण दीर्घकाल तक विद्यमान है. आज की आधुनिक और उसके बोध की स्थिति में भी यह आकर्षण किसी न किसी रूप में विद्यमान है. कदाचित भारतीय मनीषा की परम्परा प्रियता इसके लिए उत्तरदायी कही जा सकती है. अनेक कवियों द्वारा रचित वीर काव्यों में पौराणिक आख्यानों को काव्य का विषय बनाये जाने के प्रति यही मनोभावना काम करती हुई जान पड़ती है.

रचना परिमाण के दृष्टिकोण से यह तुलनात्मक दृष्टि से विचार किया जाय तो इस संपूर्ण काल में लगभग 13 महाकाव्य, 16 खण्डकाव्य एवं करीब 150 मुक्तक रचनाएँ जिनका इतिहास ग्रंथों में यत्र तत्र उल्लेख है, प्राप्त होती है. रचनाओं की वस्तुस्थिति के इससे कहीं अधिक होने का अनुमान स्वाभाविक एवं तथ्य परक कहा जायेगा. अतः यह कहना तो कठिन है कि हिन्दी वीर काव्यों की समानुपातिक स्थिति क्या है, किन्तु रचनाओं की संख्या, अनेक महत्वपूर्ण काव्य कृतियों की उपलब्धियों, कला चेतना आदि सभी दृष्टिकोण से यह महत्वपूर्ण काव्य धारा के रूप में प्रतिष्ठित है.

उपर्युक्त पाँचों " निष्कर्षों " के प्रकाश में इस काव्य धारा के सम्यक मूल्यांकन के लिए प्रतिनिधि कवियों और उनकी कृतियों का अनुशीलन आवश्यक है, जो कि अगले अध्याय का विषय है.

## संदर्भ सूची


1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पंचम संस्करण 2006, पृ. 1
2. डॉ० उदयभानु हंस - महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग, पृ. 264 ॥ संस्करण 2008 विक्रमी ॥
3. डॉ० कृष्णलाल हंस - हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, प्रथम संस्करण 1974 पृ. 14-15.
4. सम्पादक- डॉ० नगेन्द्र - हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास ॥नागरी प्रचारणी सभा॥ प्रथम संस्करण 2028 वि० पृ० 9,10
5. डा० किशोरीलाल गुप्त - हिन्दी साहित्य के इतिहासों का इतिहास प्रथम संस्करण- 1978, पृ. 114.
6. डा० गणपतिचन्द्र गुप्त- हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास,पृ. 603.
7. डा० लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय - आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका ॥1757 से 1857 तक॥ प्रथम संस्करण- 1952 ,पृ. 183.
8. विजय मोहन शर्मा- हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास- पृ. 4
9. " परम मोक्ष, फल राजपद, परसन जीवन माहिं ।
   बूटन-देवता राजसत-पद परसत चित-चाहि । "
   - भारतेन्दु ग्रंथावली- भाग-2 , सम्पादित ब्रजरत्नदास,पृ.703
10. डा० रामरतन भटनागर - हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास तृतीय संस्करण-1966, पृ. 310
11. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र - विजयनी-विजय-वैजयन्ती, पृ. 46-47.
12. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र - नीलदेवी, संस्करण 1880 , भूमिका.
13. डा० रामरमतन भटनागर, हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास तृतीय संस्करण- 1966, पृ. 334.
14. डा० मोहन अवस्थी - आधुनिक हिन्दी काव्य शिल्प, प्रथम संस्करण 1962, पृ. 74.

15. सरस्वती, जनवरी 1914, पृ. 4
16. आचार्य शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ.618 ‡संस्करण 2019 वि0‡
17. डॉ0 शिवकुमार मिश्र- नया हिन्दी काव्य, पृ. 45
18. प्रसाद - चन्द्रगुप्त, पृ. 89.
19. वही, पृ. 177
20. प्रसाद- ध्रुवस्वामिनी, पृ. 34-35.
21. प्रसाद- स्कन्दगुप्त, पृ. 119
22. वही, पृ. 151
23. प्रसाद - लहर, पृ. 51
24. वही, पृ. 52.
25. वही, पृ. 58
26. प्रसाद- महाराणा का महत्व, पृ. 9.
27. निराला- परिमल, पृ. 115.
28. वही, पृ. 110
29. वही, पृ. 110.
30. वही, पृ. 176.
31. निराला, अनामिका, पृ. 79
32. निराला, अपरा, पृ. 66
33. वही, पृ. 126.
34. निराला, गीतिका, पृ. 73.
35. निराला- परिमल, पृ. 56.
36. वही, पृ. 200.
37. निराला, अणिमा, पृ. 25.
38. धनंजय वर्मा, निराला, काव्य और व्यक्तित्व, पृ. 124.
39. द्रष्टव्य रश्मिबन्ध- परिदर्शन , पृ. 8.
40. माखनलाल चतुर्वेदी- हिमकिरीटिनी, पृ. 30
41. वही हथकड़ियाँ शीर्षक कविता, पृ. 17.

42. माखनलाल चतुर्वेदी- हिमकिरीटनी [जवानी] पृ. 112.
43. वही, पृ. 28.
44. सुभद्राकुमारी चौहान- मुकुल, पृ. 127
45. वही, पृ. 91-92.
46. नवीन- कुंकुम, पृ. 11.
47. वही, पृ. 81.
48. वही, पृ. 1-2.
49. श्यामलाल गुप्त पार्षद, झण्डा ऊँचा रहे हमारा, पृ. 15-16.
50. वही, पृ. 39.
51. एक कवि : एक देश : [ पंडित सोहनलाल द्विवेदी का अभिनन्दन ग्रंथ, डॉ० भुवनेश्वर प्रसाद गुरुमैता ] पृ. 186.
52. सोहनलाल द्विवेदी - भैरवी, पृ. 35.
53. सोहनलाल द्विवेदी - जयराष्ट्रीय निशान : भैरवी, पृ. 119.
54. मैथिलीशरण गुप्त - विकट भट, पृ. 24.
55. आर्यभूमि अंत में रहेगी, आर्य भूमि ही ।
आकर मिलेंगी यहीं संस्कृतियाँ सब की ।
होगा एक विश्व तीर्थ भारत ही भूमिका ।
- सिद्धराज, पृ. 52.
56. प्रगतिशील लेखक संघ [ प्रोग्रेसिव राइटस एसोशिएशन] अब एक अन्तर्राष्ट्रीय संघटन के रूप में हो गया है. अनेक देशों में इसकी शाखाएँ हैं. इसकी स्थापना सन् 1935 में हुई और प्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक ई० एम० फारेस्टर के सभापतित्व में इसका पहला अधिवेशन पेरिस में हुआ. डा० मुल्कराज आनन्द एवं सज्जाद जहीर के उद्योग से भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना लंदन में इसी साल हुई और उन्हीं कवियों ने सन् 36 में इसे लाकर भारतवर्ष में स्थापित किया. इसके पहले अधिवेशन के सभापति मुंशी प्रेमचन्द जी और दूसरे के महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर हुए.

- शिवदान सिंह चौहान- भारत में प्रगतिशील साहित्य की आवश्यकता, विशाल भारत, मार्च अंक- 1937.

57. विजयशंकर मल्ल- हिन्दी काव्य में प्रगतिवाद, पृ. 33.
58. डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य: उसका उद्भव और विकास, पृ. 304- 305.
59. दिनकर- चक्रवाल {भूमिका}, पृ. 12-13.
60. हिन्दी साहित्य कोश- भाग- 1, पृ. 468.
61. मैथिलीशरण गुप्त, मंगल घट, पृ. 32.
62. माखनलाल, हिमकिरीटिनी सिपाही, पृ. 35.
63. नवीन, कुंकुम, {विप्लव गायन} पृ. 11.
64. सोहनलाल द्विवेदी, प्रभाती
65. वही, सेवाग्राम- वेतवा का सत्याग्रह, पृ. 94-97.
66. सोहनलाल द्विवेदी, सुनारहा हूँ तुम्हें भैरवी, भैरवी, पृ. 113.
67. " " वासवदत्ता {सरदार चूड़ावत} पृ. 15.
68. दिनकर, हुंकार, पृ. 14.
69. दिनकर, हुंकार, अनल किरीट, पृ. 19.
70. वही, पृ. 15.
71. दिनकर, कुरुक्षेत्र, पृ.25 {तृतीय सर्ग}
72. शिवमंगल सिंह " सुमन ", विश्वास बढ़ता ही गया , पृ. 45.
73. प्रलय सृजन, परीक्षा दो, पृ. 33.
74. कुँवर चन्द्र प्रकाशसिंह, शम्पा, पृ. 74-75
75. अज्ञेय, प्रथम तार सप्तक {भूमिका} पृ. 5-6
76. " जिस प्रकार कविता रूपी माध्यम को बरतते हुए आत्माभिव्यक्ति चाहने वाले कवि को अधिकार है कि उस माध्यम का अपनी आवश्यकता के अनुसार श्रेष्ठ उपयोग करे, उसी प्रकार आत्म सत्य के अन्वेषी कवि को, अन्वेषण के प्रयोग रूप माध्यम का उपयोग करते समय उस माध्यम को भी परखने का अधिकार है. "

अज्ञेय, दूसरा सप्तक, पृ. 7

77. शिवदान सिंह " चौहान " आलोचना के मान, पृ. 86.
78. डॉ0 नामवर सिंह, हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ, पृ. 46.
79. वही, पृ. 46.
80. माखनलाल चतुर्वेदी, समर्पण, पृ. 8.
81. आनन्दकुमार, अंगराज, पृ. 21 सर्ग द्वितीय.
82. श्याम नारायण प्रसाद - झांसी की रानी, पृ. 145 ﴾तेरहवीं हुंकार﴿
83. जीवन शुक्ल - सिंहद्वार, पृ. 83.
84.